।।श्रीः।।

रूपच्छन्दोवलिः

रचयिता

शैलेश कुमार तिवारी

व्याकरणाचार्य, लब्धस्वर्णपदक एवं

अनुसन्धाता

व्याकरणविभाग

काशीहिन्दूविश्वविद्यालय, वाराणसी-५



सार्वभौमसंस्कृतप्रचारसंस्थानम्

वाराणसी-१

संवत् २०६१ ८ मार्च २००५


मैय्या
थावे वाली
विवाह मंडप

।।श्रीः।।

रूपच्छन्दोवलिः

रचयिता

शैलेश कुमार तिवारी

व्याकरणाचार्य, लब्धस्वर्णपदक* एवं

अनुसन्धाता

व्याकरणविभाग

काशीहिन्दूविश्वविद्यालय, वाराणसी-५



सार्वभौमसंस्कृतप्रचारसंस्थानम्

वाराणसी-१

संवत् २०६१ ८ मार्च २००५

प्रकाशकम्- सार्वभौमसंस्कृतप्रचारसंस्थानम्
डी ३८/११०, हौजकटोरा, वाराणसी-१

संस्करणम्- प्रथमम्

संख्या- ५००

मूल्यम्- ४०/-

अक्षरसंयोजनम्- आयुषी कम्प्यूटर्स
इन्दिरानगरं, वाराणसी

मुद्रकम्- इन्द्राप्रकाशनम्
वाराणसी

किञ्चिन्निवेदनम्

भगवतो विश्वनाथस्यानुकम्पया "रूपच्छन्दोवलि" नाम्नी कृतिरेषा प्रकाशं गच्छति इति महान् प्रमोदो जायते। यदाऽहम् उत्तरमध्यमाख्य-कक्षायां पठामि स्म, तदानीमेव गुरुभ्य: कांश्चिच्छन्दोनियमानवगम्य भगवत्या आदिशक्तिजगदम्बाया एकमष्टकमरचयम्। ततस्तेषामेव प्रेरणया "रामो राजमणि: सदा विजयते" इतिवत् कांश्चिच्छब्दान् सिद्धान्तकौमुदीस्थानाश्रित्य कांश्चिच्छ्लोकानरचयम्। पुनस्तेषामेवाज्ञया मातृभाषानुवादमपि व्यदधाम्। इदानीं त एव श्लोका यथावत् प्रकाश्यन्ते। नाहं कविर्न वा विद्वान् वर्ते अपितु बालोऽस्मि। तत्रापि शब्दानां सर्वासु विभक्तिषु क्रमश: प्रयोगो भवेद् इति कार्यं मम कृते कठिनमेवासीत्। तथापि तत्र भवतां विद्वच्चरणानामाशिषैष प्रयासो याति साफल्यम्। अथ च येषां प्रेरणया कार्यमेतत् सम्पन्नं, ये च स्वयमाशीर्वादपत्रमपि विलिख्य मदीयोत्साहसंवर्द्धनपूर्वकम् आशीर्वादम्मे प्राददु:, तेऽस्मद्गुरुचरणा: सुरभारतीप्रचारप्रसाराय समर्पितजीवना अद्वितीयव्यक्तित्वविलसिता मधुरव्यवहारा: पण्डितप्रवरश्रीवासुदेवद्विवेदि-शास्त्रिमहोदया मनसा भूयोभूय: प्रणम्यन्ते संस्मर्यन्ते च। इदानीं ते पार्थिवशरीरेण न सन्तीति महादु:खमनुभूयतेऽस्माभि:। एतत्-पुस्तकप्रकाशनादिव्यवस्था सर्वाऽपि सम्पादिता किन्तु अस्मद्दुर्भाग्यवशात् प्रकाशनात्पूर्वमेव दिवंगता। प्रकाशनेऽपि महान् विलम्बो जात:। अस्तु, तेषामाशीर्वादो वर्ततेऽस्मासु। किञ्च विश्वविख्याता विद्वांसो राज्यसभासदस्या ऋषिकल्पा: पद्मभूषणोपाधिविभूषिता: प्रो. विद्यानिवासमिश्रमहोदया: सपत्रमाशीर्वादं प्रदाय प्रोदसाहयन् माम् इति न सन्ति शब्दा मम पार्श्वे तान् प्रति किमपि वक्तुम्, अपि चास्य "रूपछन्दोवलि:" इति नामकरणमपि तैरेव कृतम्, अत: सश्रद्धं हार्दिकीं च प्रणतिं विनिवेदयामि। अस्य प्रकाशने श्रीगुरुचरणानां डॉ.जगदीशचतुर्वेद- महोदयानां महान् सहयोगो वर्तते, अतस्तेभ्यो मनसा नमनं विदधामि। ये च कृतसहयोगा मेऽनुजा: परमेश-उमेशदुर्गेशादय:, तेभ्योऽपि मंगलं कामये। सहैव प्रत्यक्षरूपेण परोक्षरूपेण वा येऽपि सहयोगिन:, ये च अस्माकं गुरवो गुरुकल्पा विद्वांस: अभिभावकाश्च, तेभ्यस्सर्वेभ्योऽपि भूयसीं प्रणतिं निवेदयामि।

सम्भाव्यन्तेऽत्रानेके दोषा, यतोहि न मयि कवित्वं न वा किमपि वैदुष्यादिकं वर्तते। अत: स्वीयबालं मां मत्वा तत्रभवन्त: क्षाम्यन्तु निजाशीर्वादञ्च प्रदायानुगृह्णन्त्विति प्रार्थयेऽहम्-

महाशिवरात्रि: — विदुषामाशिषामभिलाषी

सं. २०६१ (८.३.२००५), वाराणसी — शैलेश कुमार तिवारी

सार्वभौमसंस्कृतप्रचारसंस्थानसंस्थापकसञ्चालकानां परमपूज्यगुरुवरश्रीवासुदेवद्विवेदिशास्त्रिमहोदयानाम् आशीर्वचनम्

श्री शैलेश कुमार तिवारी बहुमुखीप्रतिभाशाली, विनयशील एवं मेरे अत्यन्त प्रिय छात्र हैं। जब मेरे संस्थान में ये आये, उस समय उत्तरमध्यमा प्रथमखण्ड के छात्र थे। सस्वरश्लोक एवं गीत प्राय: प्रतिदिन रात्रि में भोजन के बाद मुझे सुनाया करते थे। एक दिन श्लोकवाचन प्रसंग में ही कुछ छन्दों को मैंने समझाया। उसके तीसरे-चौथे दिन इन्होंने देवी का एक अष्टक लिखकर मुझे दिखाया। उसे देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई साथ ही इनकी प्रतिभा पर आश्चर्य भी हुआ। फिर मैंने इनसे कहा कि "रामो राजमणि: सदा विजयते" इस श्लोक में जैसे रामशब्द का सभी विभक्तियों में प्रयोग हुआ है, उसी प्रकार सिद्धान्तकौमदी के अन्य शब्दों को लेकर श्लोकनिर्माण करो, हम छपवायेंगे उसे और प्रोत्साहन के लिए निम्नश्लोक लिखकर एक डायरी इन्हें दी-

इयं ललितपद्यानां गीतानां संग्रहाय च।
मया दैनन्दिनी दत्ता श्रीशैलेशत्रिपाठिने।।

देखते ही देखते कुछ ही दिनों में इस कार्य को इन्होंने कर दिया। तब हमने उसी क्रम से हिन्दी अनुवाद के लिए प्रेरित किया। उसे भी इन्होंने कर दिया। आज इनकी प्रथम रचना प्रकाशित होने जा रही है। व्याकरण, साहित्य, न्याय, संगीत, कर्मकाण्ड, ज्योतिष, काव्यनिर्माण, लेखन, चित्रकला, मूर्तिकला, भाषण आदि अनेक विषयों में इनकी समान गति है। इनकी प्रतिभा, व्यवहारकुशलता और परिश्रम देखकर बड़ी प्रसन्नता होती है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि ईश्वर की अनुकम्पा एवं आप विद्वज्जनों के आशीर्वाद से संस्कृतभाषा के प्रचार-प्रसार एवं शास्त्रों के पठन-पाठन में हमेशा तत्पर रहेंगे और सर्वोत्कर्ष को प्राप्त करेंगे। मैं इनके यशस्वी एवं तेजस्वी जीवन की कामना करता हूँ।

वि.सं. २०६१
रामनवमी

वासुदेव द्विवेदी शास्त्री
सार्वभौमसंस्कृतप्रचारसंस्थानम्, वाराणसी

विश्वविख्यात भाषाविद्, साहित्यकार, राज्यसभासदस्य एवं पद्मभूषण महामनीषी प्रो. विद्यानिवासमिश्र जी के आशीर्वचन

विद्यानिवास मिश्र
सांसद (राज्यसभा)



Vidya Nivas Misra
Member of Parliament (R.S.)

॥श्री:॥ कार्तिक कृ. १२/२०६१ वि.

श्री शैलेश कुमार तिवारी ने **रूपछन्दोवलिः** नाम से रूपावली को छन्दोबद्ध किया है। छन्द मनोरम हैं। इसलिए छन्द याद हो जायें तो केवल रूप ही न याद हो, विभिन्न कारकों के प्रयोग की याद आ जाय। यह संस्कृत पढ़ने वाले बालक-बालिकाओं के समूह के लिए बड़ा उपयोगी और आकर्षक है।

मैं इस सुन्दर प्रयास के लिए इन्हें साधुवाद और आशीर्वाद देता हूँ।

विद्यानिवास मिश्र

विषयसूची



।।अथ मङ्गलाचरणम्।।

विघ्नेशं गिरिराजजास्वतनुजं शक्तिं श्रियं शारदाम्,
विश्वेशं जगतः पतिं समगुरुं नारायणं सर्वदम्।
पाणिन्यादिमुनीन् बुधान् गुरुवरान् सर्वग्रहान् निर्जरान्,
अन्याँश्चापि समान् सुपूज्यचरणान् नत्वा सदा सादरम्।।१।।

गिरिराजपुत्री के पुत्र श्री गणेश, शक्ति (महाकाली), श्री (महालक्ष्मी); शारदा (महासरस्वती), सब के गुरु एवं जगत्पति विश्वेश, सब कुछ प्रदान करने वाले नारायण, पाणिनि आदि मुनियों, विद्वानों, गुरुजनों, सभी ग्रहों एवं देवताओं को तथा और सभी पूज्य जनों को सादर नमन करके-

शब्दानाश्रयताऽत्र काँश्चन मया पद्यं नवं रच्यते,
अल्पज्ञश्च कवित्वशक्तिरहितः शास्त्रं न जानाम्यहो।
मूढो मन्दमतिस्तथापि कृपया विश्वेश्वरस्य प्रभोः,
बालोऽहं प्रयते यथामति बुधैः क्षम्या मदीया त्रुटिः।।२।।

कुछ शब्दों को लेकर नूतन पद्यों की रचना मेरे द्वारा की जा रही है। मैं यद्यपि अल्पज्ञ, कवित्वशक्ति से रहित हूँ, शास्त्र भी नहीं जानता हूँ, मूढ एवं मन्दमति हूँ, फिर भी भगवान् विश्वनाथ जी की कृपा से मैं बालक अपनी बुद्धि के अनुसार प्रयत्न कर रहा हूँ। विद्वज्जन मेरी त्रुटि को क्षमा करेंगे।

।।ॐ।।

अजन्तपुँल्लिङ्गप्रकरणम्

''अ'' श्यामः (श्याम)

श्यामः खेलति सुन्दरश्च शुभदः श्यामं भजन्ते जनाः,
श्यामेनैव हि तार्य्यते शरणगः श्यामाय तस्मै नमः।
श्यामान्नास्ति परं च वस्तु जगति श्यामस्य भक्ताः समे,
श्यामे सन्तु रताः सदा सुमनसा त्वं श्याम मामुद्धर।।३।।

प्रथमा- श्यामः खेलति सुन्दरश्च शुभदः-
सुन्दर और सभी शुभों को देने वाला श्याम खेल रहा है।

द्वितीया- श्यामं भजन्ते जनाः-
श्याम को सभी लोग भजते हैं।

तृतीया- श्यामेनैव हि तार्य्यते शरणगः-
श्याम के द्वारा ही शरणार्थी तारे जाते हैं।

चतुर्थी- श्यामाय तस्मै नमः-
उस श्याम को नमस्कार है।

पञ्चमी- श्यामान्नास्ति परं च वस्तु जगति।
श्याम से अतिरिक्त संसार में कोई वस्तु नहीं है।

षष्ठी- श्यामस्य भक्ताः समे'
श्याम के सभी भक्त गण!

सप्तमी- श्यामे सन्तु रताः सदा सुमनसा-
प्रसन्न मन से (आप सब) श्याम में रत हो जावें।

सम्बो.- त्वं श्याम! माम् उद्धर-
हे श्याम! तुम मेरा उद्धार करो।

निर्जर - शब्दः (देव)

स्वर्गे राजति निर्जरोऽर्चितपदो ना नौति तं निर्जरम्,
तुष्टा निर्जरसा च निर्जरस एवेर्ष्यन्ति सुप्तेऽपि न।
अन्ये निर्जरसोऽत्र निर्जरस एवांशाः समे सन्ति ते,
स्नेहं निर्जरसि प्रजा प्रकुरुते छिन्द्याःजरां निर्जर।।४।।

प्रथमा- स्वर्गे राजति निर्जरोऽर्चितपदः-
पूजित निर्जर स्वर्ग में राज करते हैं।

द्वितीया- ना नौति तं निर्जरम्-
मनुष्य उस निर्जर को नमन करता है।

तृतीया- तुष्टा निर्जरसा च-
निर्जर से सन्तुष्ट लोग-

चतुर्थी- निर्जरस एवेर्ष्यन्ति सुप्तेऽपि न-
निर्जर से ही स्वप्न में भी ईर्ष्या नहीं करते।

पञ्चमी- अन्ये निर्जरसोऽत्र-
जो यहाँ निर्जर से अतिरिक्त हैं,

षष्ठी- निर्जरस एवांशाः समे सन्ति ते-
निर्जर के ही वे सब अंश हैं।

सप्तमी- स्नेहं निर्जरसि प्रजा प्रकुरुते-
प्रजा (जनता) निर्जर से स्नेह करती है।

सम्बो.- छिन्द्याः जरां निर्जर-
हे निर्जर! जरा (बुढ़ापा) का नाश करो।

"आ" गोपाः (ग्वाला)

गोपा वक्ति च सादरं सुवचनं गोपां यदा, मोहनो
गोपाऽस्यां भुवि खेलितः सह तदा गोपे तु सर्वप्रदः।
गोपस्त्वेव पृथग्गतः कथमहो विस्मृत्य गोपो दशां,
दोषो गोपि च कोऽपि चेद् भवति तं गोपा द्रुतं ज्ञापय।।५।।

प्रथमा- गोपाः वक्ति च सादरं सुवचनं-
गोप आदर पूर्वक अपने वचन को कहता है,

द्वितीया- गोपां, यदा मोहनः-
गोप से, जब मोहन ने

तृतीया- गोपा अस्यां भुवि खेलितः सह तदा-
इस भू पर गोप के साथ क्रीडा की, तब

चतुर्थी- गोपे तु सर्वप्रदः-
गोप के लिए सर्वप्रद था।

पञ्चमी- गोपः तु एव पृथग् गतः कथमहो-
अब गोप से ही पृथक् क्यों चला गया,

षष्ठी- विस्मृत्य गोपः दशाम्-
गोप की दशा को भूला कर।

सप्तमी- दोषः गोपि च कः अपि चेद् भवति,-
यदि कोई दोष गोप में होता है तो

सम्बो.- तं गोपाः! द्रुतं ज्ञापय-
उसको हे गोप! जल्दी बताओ।

"इ" सूरिः (विद्वान्)

सूरिस्त्वस्ति गुणप्रदश्च सततं सेवेत सूरिं सदा,
रक्ष्यन्तेऽत्र हि सूरिणा समगुणा नित्यं नमः सूरये।
सूरेः सम्पठतां गुणान् सुपथदान् सूरेः समीपे वसेत्,
सूरौ सन्त्यमला गुणाः सुपथदाः सूरे जनान् शिक्षय।।६।।

प्रथमा- सूरिस्त्वस्ति गुणप्रदश्च सततम्-
विद्वान् हमेशा गुणों को देने वाला होता है।

द्वितीया- सेवेत सूरिं सदा,-
हमेशा विद्वान् की सेवा करनी चाहिए।

तृतीया- रक्ष्यन्तेऽत्र हि सूरिणा समगुणाः-
विद्वान् के द्वारा ही सभी गुणों की रक्षा की जाती है।

चतुर्थी- नित्यं नमः सूरये-
विद्वान् को हमेशा नमस्कार है।

पञ्चमी- सूरेः सम्पठतां गुणान् सुपथदान्-
विद्वान् से सन्मार्गप्रद गुणों को पढ़ना (जानना) चाहिए।

षष्ठी- सूरेः समीपे वसेत्-
विद्वान् के समीप रहना चाहिए।

सप्तमी- सूरौ सन्त्यमला गुणाः सुपथदाः-
विद्वान् में सन्मार्गप्रद गुण होते हैं।

सम्बो.- सूरे! जनान् शिक्षय-
हे विद्वान्! लोगों को शिक्षित करो।

"इ" पतिः (स्वामी)

सर्वेषां पतिरेक एव भुवि तं ध्यायन्ति सर्वे पतिम्,
पत्या येन च सृज्यते जगदिदं पत्ये हि तस्मै नमः।
तस्मात् पत्युरजायतामरगणोंऽशास्तस्य पत्युः समे,
तस्मिन्नेव पतौ स्थितं जगदिदं नूनं पते पाहि नः।।७।।

प्रथमा- सर्वेषां पतिरेक एव भुवि-
संसार में सबका स्वामी एक ही है।

द्वितीया- तं, ध्यायन्ति सर्वे पतिम्-
उस स्वामी का सबलोग ध्यान करते हैं।

तृतीया- पत्या येन च सृज्यते जगदिदम्-
जिस स्वामी के द्वारा इस जगत् की सृष्टि की जाती है।

चतुर्थी- पत्ये हि तस्मै नमः-
उस स्वामी को नमस्कार है।

पञ्चमी- तस्मात् पत्युरजायतामरगणः-
उसी स्वामी से देवता उत्पन्न हुए।

षष्ठी- अंशाः तस्य पत्युः समे-
सबलोग उसी स्वामी के अंश हैं।

सप्तमी- तस्मिन् एव पतौ स्थितं जगत् इदम्-
उसी स्वामी में यह सम्पूर्ण जगत् स्थित है।

सम्बो.- नूनं पते पाहि नः-
हे स्वामिन्! निश्चित ही हम लोगों की रक्षा करो।

''इ'' सखि-शब्दः (मित्र)

लोकेऽस्मिन् स्वसखा सदैव सुखदो नूनं सखायं स्मरेत्,
सख्या नास्ति समोऽत्र कश्चन जनः सख्ये नहीर्ष्या क्वचित्।
सख्युर्नैव भयं कदापि भवति श्लाघ्याश्च सख्युर्गुणाः,
सख्यौ कोऽपि न दोष, आव्रजति स श्रुत्वा सखे! सर्वदा।।८।।

प्रथमा- लोके अस्मिन् स्वसखा सदा एव सुखदः-
लोक में अपना मित्र सदा सुख देने वाला होता है।

द्वितीया- नूनं सखायं स्मरेत्-
मित्र का स्मरण अवश्य करना चाहिए।

तृतीया- सख्या नास्ति समः अत्र कश्चन जनः-
मित्र के समान दूसरा कोई मनुष्य नहीं है यहाँ।

चतुर्थी- सख्ये नहि ईर्ष्या क्वचित्-
मित्र के लिए किसी प्रकार की ईर्ष्या नहीं होती।

पञ्चमी- सख्युः नैव (न एव) भयं कदापि भवति-
मित्र से कभी भी भय नहीं होता है।

षष्ठी- श्लाघ्याः च सख्युः गुणाः-
मित्र के गुण प्रशंसनीय हैं।

सप्तमी- सख्यौ कोऽपि (कः अपि) न दोषः-
मित्र में कोई दोष नहीं है,

सम्बो.- आव्रजति स श्रुत्वा सखे! सर्वदा-
"हे सखे!" ऐसा सुनकर तत्क्षण उपस्थित हो जाता है।

"ई" सुधीः (विद्वान्)

पूज्योऽस्तीह सुधीः सदा च सुधियं सेवेत तं सर्वदा,
शिक्ष्यन्ते सुधिया जना हि सुधिये विद्या च या रोचते।
तां विद्यां सुधियः पठेच्च सुधियो गत्वा गृहं वै ध्रुवं,
श्रद्धाभक्तिसुराशिरस्ति सुधियि ध्यानं सुधीर्दीयताम्।।१।।

प्रथमा- पूज्यः अस्ति इह सुधीः सदा च-
विद्वान् यहाँ सदा पूजनीय है।

द्वितीया- सुधियं सेवेत तं सर्वदा-
(अतः) उस विद्वान् की सेवा सर्वदा करनी चाहिए।

तृतीया- शिक्ष्यन्ते सुधिया जनाः हि-
विद्वान् के द्वारा ही लोग शिक्षित किये जाते हैं।

चतुर्थी- सुधिये विद्या च या रोचते-
सुधी को जो विद्या अच्छी लगे,

पञ्चमी- तां विद्यां सुधियः पठेच्च (पठेत् च)-
उस विद्या को सुधी से-

षष्ठी- सुधियो (सुधियः) गत्वा गृहं वै ध्रुवम्-
सुधी के घर जाकर अवश्य पढ़ लेना चाहिए।

सप्तमी- श्रद्धाभक्तिसुराशिरस्ति (-शिः अस्ति) सुधियि-
सुधी में श्रद्धा एवं भक्ति की राशि भरी पड़ी है।

सम्बो.- ध्यानं सुधीः दीयताम्-
हे सुधी! ध्यान दिया जाय।

"ई" पपीः (सूर्य)

आकाशे सुतरामुदेति हि पपीरर्चन्तु सर्वे पपीम्,
पप्येदं किल काशितं समजगत् तस्मै च पप्ये नमः।
पप्यो विभ्यति कौ निशाचरगणाः पप्यः प्रकाशोऽखिलः,
सौम्याः सन्ति पपी गुणाश्च बहवस्त्वं भो पपीः पाहि नः।।१०।।

प्रथमा- आकाशे सुतराम् उदेति हि पपीः-
आकाश में सदा सूर्य उदित होते हैं।

द्वितीया- अर्चन्तु सर्वे पपीम्-
सब लोग सूर्य की अर्चना करें।

तृतीया- पप्येदं (पप्या इदं) किल काशितं समजगत्-
यह सम्पूर्ण जगत् सूर्य से ही प्रकाशित है।

चतुर्थी- तस्मै च पप्ये नमः-
उस सूर्य को नमस्कार है।

पञ्चमी- पप्यो (पप्यः) विभ्यति कौ निशाचरगणाः-
पृथ्वी पर निशाचरों का समूह सूर्य से डरता है।

षष्ठी- पप्यः प्रकाशोऽखिलः (-शः अखिलः)-
सूर्य का प्रकाश अखिल (असीमित) है।

सप्तमी- सौम्याः सन्ति पपी गुणाः च बहवः-
सूर्य में सौम्य गुण बहुत हैं।

सम्बो.- त्वं भो पपीः पाहि नः-
हे सूर्य! तुम हमलोगों की रक्षा करो।।

"ई" प्रधीः (बुद्धिमान्)

सर्वं साधयति प्रधीः प्रतिभया प्रध्यं स्तुवन्ति प्रजाः,
प्रध्या शोभितमस्ति विश्वमखिलं प्रध्ये न दुःखं क्वचित्।
प्रध्यो दूरमवस्थितिर्न शुभदा प्रध्यो विधेया नतिः,
प्रध्यि प्रेम विधीयतां हि नितरां प्रज्ञां प्रदेहि प्रधीः।।११।।

प्रथमा- सर्वं साधयति प्रधीः प्रतिभया-
प्रधी (बुद्धिमान्) अपनी प्रतिभासे सब कुछ सिद्ध कर लेता है।

द्वितीया- प्रध्यं स्तुवन्ति प्रजाः-
लोग बुद्धिमान् की स्तुति (प्रशंसा) करते हैं।

तृतीया- प्रध्या शोभितमस्ति विश्वमखिलम्-
प्रधी से सम्पूर्ण विश्व शोभित है।

चतुर्थी- प्रध्ये नः दुःखं क्वचित्-
प्रधी के लिए कहीं भी दुःख नहीं है।

पञ्चमी- प्रध्यो दूरमवस्थितिर्न शुभदा-
प्रधी से दूर रहना ठीक नहीं है।

षष्ठी- प्रध्यो विधेया नतिः-
प्रधी को नमस्कार करना चाहिये।

सप्तमी- प्रध्यि प्रेम विधीयतां हि नितराम्-
प्रधी में हमेशा स्नेह (प्रेम) रखना चाहिये।

सम्बो.- प्रज्ञां प्रदेहि प्रधीः-
हे प्रधी! प्रज्ञा प्रदान करो।

"उ" भानुः (सूर्य)

भानुः खे नितरामुदेति निखिले भानुं कृपालुं भजे,
व्याप्तं येन हि भानुनाऽखिल-जगत् तस्मै नमो भानवे।
भानोः सम्भवति प्रकाशजननं भानोर्वयं स्मः सुता,
भानौ सन्ति शुभा गुणा बहुविधा भानो सदा शं कुरु।।१२।।

प्रथमा- भानुः खे नितराम् उदेति निखिले-
निखिल गगन में हमेशा भानु का उदय होता है।

द्वितीया- भानुं कृपालुं भजे-
कृपा करने वाले भानु को भजता हूँ।

तृतीया- व्याप्तं येन हि भानुना अखिलजगत्-
अखिल (सम्पूर्ण) जगत् जिस भानु से व्याप्त है,

चतुर्थी- तस्मै नमः भानवे-
उस भानु को नमस्कार है।

पञ्चमी- भानोः सम्भवति प्रकाशजननम्-
भानु से ही प्रकाश की उत्पत्ति होती है।

षष्ठी- भानोः वयं स्मः सुताः-
हमलोग भानु की ही सन्तान (पुत्र) हैं।

सप्तमी- भानौ सन्ति शुभा गुणा बहुविधाः-
भानु में अनेक प्रकार के शुभ गुण हैं।

सम्बो.- भानो सदा शं कुरु-
हे भानो! सदा कल्याण करो।।

"ऋ" दातृ - शब्दः (देनेवाला)

दाताऽस्तीश्वर एक एव भुवि दातारं श्रयन्ते जना,
दात्रा श्रीहरिणा जगद् विरचितं दात्रे च तस्मै नमः।
दातुर्नैव विभेति कश्चन जनो दातुश्च पुत्राः समे,
तस्मिन् दातरि सन्ति सुन्दरगुणा दातर्धनं देहि नः।।१३।।

प्रथमा- दाताऽस्तीश्वरः एकः एव भुवि-
भूलोक में ईश्वर ही एक दाता है।

द्वितीया- दातारं श्रयन्ते जनाः-
लोग दाता का ही आश्रय लेते हैं।

तृतीया- दात्रा श्रीहरिणा जगत् विरचितम्-
दाता श्रीहरि ने जगत् की रचना की है।

चतुर्थी- दात्रे च तस्मै नमः-
उस दाता को नमस्कार है।

पञ्चमी- दातुः नैव (न एव) विभेति कश्चन जनः-
कोई भी व्यक्ति दाता से नहीं डरता।

षष्ठी- दातुश्च पुत्राः समे-
सब लोग दाता (ईश्वर) के पुत्र हैं।

सप्तमी- तस्मिन् दातरि सन्ति सुन्दरगुणाः-
उस दाता में सुन्दर गुण हैं।

सम्बो.- दातः धनं देहि नः-
हे दाता! हमलोगों को धन दो।

"ऋ" पितृ-शब्दः (पिता)

संसारस्य पिता हरिश्च पितरं प्रेम्णा सुवन्दे बुधम्,
पित्रा साकमहर्निशन्निवसतु द्रुह्यान्न पित्रे क्वचित्।
पृथ्व्यां नास्ति पितुर्विना किमपि शं पाल्येत चाज्ञा पितुः,
स्नेहाः सन्ति सुतान् प्रतीह पितरि त्वं भो पितः पालय।।१४।।

प्रथमा- संसारस्य पिता हरिः च-
संसार का पिता हरि है।

द्वितीया- पितरं प्रेम्णा सुवन्दे बुधम्-
प्रेम से बुध (विद्वान्) पिता की वन्दना करता हूँ।

तृतीया- पित्रा साकम् अहर्निशं निवसतु-
पिता के साथ रात-दिन रहना चाहिए।

चतुर्थी- द्रुह्यात् न पित्रे क्वचित्-
कभी भी पिता से द्रोह नहीं करना चाहिए।

पञ्चमी- पृथ्व्यां नास्ति पितुः विना किमपि शम्-
पृथ्वी पर पिता के बिना किसी प्रकार का कल्याण नहीं है।

षष्ठी- पाल्येत च आज्ञा पितुः-
पिता की आज्ञा का पालन करना चाहिए।

सप्तमी- स्नेहाः सन्ति सुतान् प्रति इह पितरि-
पिता में पुत्रों के प्रति स्नेह हैं।

सम्बो.- त्वं भो पितः पालय-
हे पिता! तुम पालन करो।

"ऐ" रै-शब्दः (धन)

लोके रा भवति श्रमेण निखिले रायं श्रमेणार्जयेद्,
राया नास्ति विना सुजीवनमहो राये च लक्ष्मीं भजेत्।
रायो धर्मभवस्ततः सुखभवो रायः शुभोऽल्पव्ययो,
वृद्धी रायि यथा तथैव सततं श्राम्येद् गृहे रा वसेः।।१५।।

प्रथमा- लोके रा (राः) भवति श्रमेण निखिले-
निखिल लोक में श्रम से ही धन होता है।

द्वितीया- रायं श्रमेण अर्जयेत्-
परिश्रम से धन का अर्जन करना चाहिए।

तृतीया- राया नास्ति विना सुजीवनम् अहो-
धन के बिना सुखमय जीवन नहीं है।

चतुर्थी- राये च लक्ष्मीं भजेत्-
धन के लिए लक्ष्मी की सेवा करें।

पञ्चमी- रायः धर्मभवः ततः सुखभवः-
धन से धर्म और धर्म से सुख होता है।

षष्ठी- रायः शुभः अल्पव्ययः-
धन का अल्पव्यय शुभ (अच्छा होता) है।

सप्तमी- वृद्धी (वृद्धिः) रायि यथा तथा एव सततं श्राम्येद्-
धन में वृद्धि जैसे हो वैसा ही श्रम सदा करना चाहिए।

सम्बो.- गृहे रा (राः) वसेः-
हे धन! घर में निवास करो।

''ओ'' गो-शब्दः (बैल या गाय)

भ्रात्रा तुल्य इहास्ति गौः खलु नृणां नूनं च गां पालयेत्,
लाभाः सन्ति गवा सदा बहुविधाः कुर्याद् गवे पूजनम्।
गोर्नैवेह विभेतु कश्चन जनः सेवा विधेया हि गोः,
आरूढो गवि शङ्करः पशुपतिः भो गौः सदा वर्द्धय।।१६।।

प्रथमा- भ्रात्रा तुल्य इह अस्ति गौः खलु नृणाम्-
मनुष्यों के लिए यहाँ गो (बैल) भ्रातृतुल्य है।

द्वितीया- नूनं च गां पालयेत्-
गो का पालन अवश्य करना चाहिए।

तृतीया- लाभाः सन्ति गवा सदा बहुविधाः-
गो से हमेशा अनेक प्रकार के लाभ होते हैं।

चतुर्थी- कुर्याद् गवे पूजनम्-
गो का (के लिए) पूजन करना चाहिए।

पञ्चमी- गोः न एव इह विभेतु कश्चन जनः-
गो से कोई व्यक्ति भयभीत न हो।

षष्ठी- सेवा विधेया हि गोः-
गो की सेवा करनी चाहिए।

सप्तमी- आरूढः गवि शङ्करः पशुपतिः-
पशुपति शंकर गो (बैल) पर आरूढ़ हैं।

सम्बो.- भो गौः सदा वर्द्धय-
हे गो! सदा वृद्धि करो।।

''औ'' ग्लौ-शब्दः (चन्द्रमा)

ग्लौ रात्रौ समुदेति खे च निखिले ग्लावं भजेत् सर्वदा,
ग्लावैवात्र खलु प्रसीदति मनो ग्लावे नमोऽहर्निशम्।
ग्लावश्चैव निशि प्रकाशसुभवो ग्लावो वरा कौमुदी,
ग्लावि श्लाघ्यशुभा मनोहरगुणा ग्लौः पार्थिवान् रञ्जय।।१७।।

प्रथमा- ग्लौ (ग्लौः) रात्रौ समुदेति खे च निखिले-
अखिल गगन में रात में चन्द्रमा निकलता है।

द्वितीया- ग्लावं भजेत् सर्वदा-
चन्द्रमा को हमेशा भजना चाहिए।

तृतीया- ग्लावैवात्र (ग्लावा एव अत्र) खलु प्रसीदति मनः-
चन्द्रमा से ही यहाँ मन प्रसन्न होता है।

चतुर्थी- ग्लावे नमः अहर्निशम्-
चन्द्रमा को रात-दिन नमस्कार है।

पञ्चमी- ग्लावः च एव निशि प्रकाशसुभवः-
चन्द्रमा से ही रात में प्रकाश होता है।

षष्ठी- ग्लावः वरा कौमुदी-
चन्द्रमा की कौमुदी (चाँदनी) श्रेष्ठ है।

सप्तमी- ग्लावि श्लाघ्यशुभाः मनोहरगुणाः-
चन्द्रमा में प्रशंसनीय, शुभ एवं मन को हर लेने वाले गुण विद्यमान हैं।

सम्बो.- ग्लौः पार्थिवान् रञ्जय-
हे चन्द्र! पृथ्वी पर रहने वालों को प्रसन्न करो।

अजन्तस्त्रीलिङ्गप्रकरणम्

"आ" विद्या

या विद्याऽस्ति सदा शुभा सुगुणदा विद्यां च तां निर्दिशेद्,
मुक्तिः स्याच्च सुविद्यया ददतु विद्यायै स्वकालं शुभम्।
विद्याया भवति प्रभा झटिति विद्यायाश्च भक्ताः समे,
विद्यायां हि रता भवन्तु मनसा विद्ये वसेर्नो हृदि।।१८।।

प्रथमा- या विद्या अस्ति सदा शुभा सुगुणदा-
जो विद्या सदा शुभ और सद्गुणों को देने वाली है,

द्वितीया- विद्यां च तां निर्दिशेत्-
उस विद्या का निर्देश करना चाहिए।

तृतीया- मुक्ति स्यात् च सुविद्यया-
सुविद्या से (ही) मुक्ति होती है।

चतुर्थी- ददतु विद्यायै स्वकालं शुभम्-
विद्या के लिए अपने शुभ समय को देना (लगाना) चाहिए।

पञ्चमी- विद्यायाः भवति प्रभा झटिति-
विद्या से अतिशीघ्र प्रभा (प्रकाश) होती है।

षष्ठी- विद्यायाः च भक्ता समे-
विद्या के समस्त उपासक भक्त!

सप्तमी- विद्यायां हि रता भवन्तु मनसा-
मन से विद्या (अध्ययन) में संलग्न हो जावें।

सम्बो.- विद्ये वसेनों हृदि-
हे विद्ये! हमारे हृदय में निवास करो।

अम्बा - शब्दः (माँ)

अम्बा पाति सुतान् समान् करुणया शून्या धराऽम्बां विना,
संसारो रचितोऽम्बया किल ययाऽम्बायै च तस्यै नमः।
अम्बाया न पृथग् भवेद् भुवि सदाम्बायाः समीपे वसेत्,
अम्बायां गुणराशिरस्ति शुभदो ह्यम्ब प्रसीदेः सदा।।१९।।

प्रथमा- अम्बा पाति सुतान् समान् करुणया-
अम्बा (माँ) करुणा से सभी पुत्रों की रक्षा करती हैं।

द्वितीया- शून्या धराऽम्बां विना-
अम्बा (माँ) के बिना धरती शून्य है।

तृतीया- संसारो रचितोऽम्बया किल यया-
जिस अम्बा के द्वारा संसार की रचना हुई है।

चतुर्थी- अम्बायै च तस्यै नमः-
उस अम्बा को नमस्कार है।

पञ्चमी- अम्बाया न पृथग् भवेद् भुवि-
धरती पर अम्बा (माँ) से अलग कभी नहीं होना चाहिये।

षष्ठी- सदाम्बायाः समीपे वसेत्-
हमेशा अम्बा के समीप रहना चाहिये।

सप्तमी- अम्बायां गुणराशिरस्ति शुभदो हि-
अम्बा में शुभद गुणराशि है।

सम्बो.- अम्ब प्रसीदेः सदा-
हे अम्ब (माँ)! हमेशा प्रसन्न रहो।

"इ" बुद्धिः (बुद्धि)

बुद्धिः सर्वबलप्रदाऽस्त्यखिलकौ शंसन्ति बुद्धिं बुधा,
बुद्ध्या नास्ति विना बलं नहि धनं सेवेत बुद्ध्यै गुरुम्।
बुद्ध्या एव पलायते रिपुदलं बुद्ध्या महत्त्वं बहु,
बुद्ध्यामेव बलादिकञ्च सकलं बुद्धे वसेर्मस्तके।।२०।।

प्रथमा- बुद्धिः सर्वबलप्रदा अस्ति अखिल-कौ-
अखिल भूमि पर बुद्धि सभी बलों की दात्री है।

द्वितीया- शंसन्ति बुद्धिं बुधाः-
बुधजन बुद्धि की प्रशंसा करते हैं।

तृतीया- बुद्ध्या नास्ति विना बलं नहि धनम्-
बुद्धि के विना न बल है न धन ही।

चतुर्थी- सेवेत बुद्ध्यै गुरुम्-
बुद्धि के लिए गुरु की सेवा करनी चाहिए।

पञ्चमी- बुद्ध्याः एव पलायते रिपुदलम्-
बुद्धि से ही रिपुओं का दल दूर भाग जाता है।

षष्ठी- बुद्ध्याः महत्त्वं बहु-
बुद्धि का बड़ा महत्त्व है।

सप्तमी- बुद्ध्याम् एव बलादिकं च सकलम्-
बल आदि सब कुछ बुद्धि में ही है।

सम्बो.- बुद्धे वसेः मस्तके-
हे बुद्धे! तुम मस्तिष्क में निवास करो।

"ई" गौरी (गौरी)

या गौरी जनतोषिणी शुभकरी गौरीं भजे तामहं,
गौर्य्या साकमवस्थितिः पशुपते; गौर्य्यै नमस्सादरम्।
गौर्य्याः सम्भवतीह मोदजननं गौर्या वयं स्मः सुताः,
गौर्यां शक्तमहेश्वरो भयहरोऽस्मान् गौरि रक्षानिशम्।।२१।।

प्रथमा- या गौरी जनतोषिणी शुभकरी-
जो जनों को सन्तुष्ट एवं मंगल करने वाली गौरी,

द्वितीया- गौरीं भजे तामहम्-
उस गौरी का भजन मैं करता हूँ।

तृतीया- गौर्य्या साकम् अवस्थिति; पशुपते:-
गौरी के साथ ही पशुपति की अवस्थिति (निवास) है।

चतुर्थी- गौर्य्यै नम; सादरम्-
गौरी को आदर पूर्वक नमस्कार है।

पञ्चमी- गौर्याः सम्भवति इह मोदजननम्-
गौरी से ही यहाँ प्रसन्नता (मंगल) उत्पन्न होती है।

षष्ठी- गौर्याः वयं स्म: सुता:-
हमलोग गौरी के पुत्र हैं।

सप्तमी- गौर्यां शक्तमहेश्वर भयहर:-
गौरी में आसक्त महेश्वर भय को हरने वाले हैं।

सम्बो.- अस्मान् गौरि रक्ष अनिशम्-
हे गौरि! अहर्निश हमलोगों की रक्षा करो।

"ई" लक्ष्मीः (लक्ष्मी)

लक्ष्मीः श्रेष्ठतमाऽस्ति सिद्धिशुभदा लक्ष्मीं सदोपास्महे,
श्रीलक्ष्म्यैव सुहर्षिताश्च मनुजा लक्ष्म्यै न कोऽपीर्ष्यते।
लक्ष्म्या दूरमवस्थितिस्त्वशुभदा लक्ष्म्या गुणो गीयतां,
लक्ष्म्यामेव हरी रतोऽस्ति नितरां भो लक्ष्मि तुभ्यं नतिः।।२२।।

प्रथमा- लक्ष्मीः श्रेष्ठतमा अस्ति सिद्धिशुभदा-
लक्ष्मी श्रेष्ठतम, सिद्धियों एवं शुभों को देने वाली है।

द्वितीया- लक्ष्मीं सदा उपास्महे-
लक्ष्मी की उपासना हमेशा करते हैं।

तृतीया- श्रीलक्ष्म्या एव सुहर्षिता; च मनुजाः-
श्रीलक्ष्मी के द्वारा ही मनुष्य प्रसन्न रहते हैं।

चतुर्थी- लक्ष्म्यै न कोऽपि (कः अपि) ईर्ष्यते-
लक्ष्मी से कोई ईर्ष्या नहीं करता है।

पञ्चमी- लक्ष्म्याः दूरम् अवस्थितिः तु अशुभदा-
लक्ष्मी से दूर रहना शुभप्रद नहीं है।

षष्ठी- लक्ष्म्याः गुणः गीयताम्-
लक्ष्मी का गुणगान करना चाहिए।

सप्तमी- लक्ष्म्याम् एव हरिः रतः अस्ति नितराम्-
सदा हरि लक्ष्मी में ही रत रहते हैं।

सम्बो.- भो (भोः) लक्ष्मि तुभ्यं नतिः-
हे लक्ष्मि! तुमको नमस्कार है।

''ई'' श्रीः (लक्ष्मी)

श्रीर्वन्द्या मनुजैश्च तैः सुमनसेच्छेयुः सदा ये श्रियं,
लोकेऽस्मिन्न विना श्रिया भवति शं मात्रे श्रिये स्यान्नतिः।
सिद्ध्यृद्धिप्रभवः श्रियोऽखिलजनैः कार्यं श्रियः पूजनं,
वर्तन्ते सकलाः श्रियां च निधयः श्रि त्वं धनं देहि नः।।२३।।

प्रथमा- श्रीःवन्द्या मनुजैः च तैः सुमनसा-
उन मनुष्यों द्वारा मन से श्री (लक्ष्मी) वन्दनीय हैं,

द्वितीया- इच्छेयुः सदा ये श्रियम्-
जो सदा श्री को चाहें। (चाहते हों)

तृतीया- लोके अस्मिन् न विना श्रिया भवति शम्-
इस लोक में श्री (लक्ष्मी) के विना कल्याण नहीं है।

चतुर्थी- मात्रे श्रिये स्यात् नतिः-
माता श्री को नमस्कार है।

पञ्चमी- सिद्धि-ऋद्धिप्रभवः श्रियः-
श्री से ही ऋद्धि-सिद्धयों का आविर्भाव होता है।

षष्ठी- अखिलजनैः कार्यं श्रियः पूजनम्-
सभी लोगों को श्री का पूजन करना चाहिए।

सप्तमी- वर्तन्ते सकलाः श्रियां च निधयः-
सभी निधियाँ श्री में अवस्थित हैं।

सम्बो.- श्रि त्वं धनं देहि नः-
हे श्रि! तुम हमलोगों को धन दो।

"ई" स्त्री - शब्दः (स्त्री)

स्त्री लक्ष्मीः सदनस्य याऽस्ति सुभगा सम्मानयेत्तां स्त्रियम्,
भूष्यन्ते पुरुषाः स्त्रिया विमलया श्रेयः स्त्रियै कल्प्यताम्।
सौख्यं नास्ति विना स्त्रियास्त्रिभुवने कार्यं स्त्रिया रक्षणम्,
तुष्टायां सदने स्त्रियां समसुखं स्त्रि त्वं सदा नन्द्यताम्।।२४।।

प्रथमा- स्त्री लक्ष्मीः सदनस्य याऽस्ति सुभगा-
जो घर की लक्ष्मीरूप सौभाग्यवती स्त्री है,

द्वितीया- सम्मानयेत्तां स्त्रियम्-
उस स्त्री को सम्मानित करना चाहिये।

तृतीया- भूष्यन्ते पुरुषाः स्त्रिया विमलया-
अच्छी स्त्री से पुरुष विभूषित होते हैं।

चतुर्थी- श्रेयः स्त्रियै कल्प्यताम्-
स्त्री के लिए श्रेय (कल्याण) की कल्पना करनी चाहिये।

पञ्चमी- सौख्यं नास्ति विना स्त्रियास्त्रिभुवने-
तीनों लोकों में स्त्री के विना सुख नहीं है।

षष्ठी- कार्यं स्त्रिया रक्षणम्-
स्त्री की रक्षा करनी चाहिये।

सप्तमी- तुष्टायां सदने स्त्रियां समसुखम्-
घर में स्त्री के सन्तुष्ट रहने से सारे सुखों की प्राप्ति हो जाती है। (स्त्री के सन्तुष्ट रहने पर सब सुख है।

सम्बो.- स्त्रि! त्वं सदा नन्द्यताम्-
हे स्त्री! तुम सदा आनन्द से (प्रसन्न) रहो।

"उ" धेनुः (गाय)

धेनुस्त्वस्ति सुपालिकाऽस्य जगतो धेनुं नरः पालयेद्,
धेन्वा नो सदृशोऽस्ति कश्चन पशुर्धेन्वे प्रणामः सदा।
धेन्वा लभ्यमिदं घृतं दधि पयो धेन्वाः शुभं गोमयं,
धेन्वां वै निवसन्ति निर्जरगणा धेनो प्रसीदानिशम्।।२५।।

प्रथमा- धेनुः तु अस्ति सुपालिका अस्य जगतः-
धेनु तो इस लोक की पालनकर्त्री ही है।

द्वितीया- धेनुं नरः पालयेद्-
मनुष्य को धेनु (गो) का पालन करना चाहिए।

तृतीया- धेन्वा नो सदृशः अस्ति कश्चन पशुः-
धेनु के सदृश अन्य कोई पशु नहीं है।

चतुर्थी- धेन्वे प्रमाणः सदा-
सदा धेनु को प्रणाम है।

पञ्चमी- धेन्वाः लभ्यम् इदं घृतं दधि पयः-
यह घी दधि या दूध धेनु से ही लभ्य है।

षष्ठी- धेन्वाः शुभं गोमयम्-
धेनु का गोमय शुभ है।

सप्तमी- धेन्वां वै निवसन्ति निर्जरगणाः-
धेनु में देववृन्द निवास करते हैं।

सम्बो.- धेनो प्रसीद अनिशम्-
हे धेनो! अहर्निश प्रसन्न रहो।

"ऊ" वधूशब्दः (बहू)

या लोकेऽस्ति वधूः स्वभावसरला ना श्लाघते तां वधूम्,
वध्वा भूषितमस्ति सर्वसदनं वध्वै ददात्वादरम्।
वध्वा नास्ति विना सुखं निजगृहे वध्वा स्थितिः सौख्यदा,
वध्वामस्तु रतिः सदैव विमला लोके वधु भ्राज्यताम्।।२६।।

प्रथमा- या लोकेऽस्ति वधूः स्वभावसरला-
लोक में जो बहू स्वभाव से सरल है।

द्वितीया- ना श्लाघते तां वधूम्-
मनुष्य उस वधू की प्रशंसा करता है।

तृतीया- वध्वा भूषितमस्ति सर्वसदनम्-
सम्पूर्ण सदन (गृह) वधू से विभूषित है।

चतुर्थी- वध्वै ददात्वादरम्-
वधू के लिए आदर देना चाहिए।

पञ्चमी- वध्वा नास्ति विना सुखं निजगृहे-
अपने घर में वधू के बिना सुख नहीं है।

षष्ठी- वध्वा स्थितिः सौख्यदा-
वधू की स्थिति सुखद होती है।

सप्तमी- वध्वामस्तु रतिः सदैव विमला-
वधू मे हमेशा विमल अनुराग हो।

सम्बो.- लोके वधु भ्राज्यताम्-
हे वधु! लोक में शोभित होवो।

"ओ" द्यो (स्वर्ग या आकाश)

द्यौर्लोकेषु महत्तमा च सुखदा द्यां यान्ति सन्मानवा,
येषां नास्ति समं द्यवा किमपि ते कुर्वन्ति पुण्यं द्यवे।
राजा द्योरमरस्त्रिशंकुरपतद् योग्यास्तु न द्योः समे,
सर्वैरुष्यत एव तद्द्यवि सुरैः द्यौस्त्वं जनानुद्धर।।२७।।

प्रथमा- द्यौः लोकेषु महत्तमा च सुखदा-
स्वर्ग लोकों में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और सुखद है।

द्वितीया- द्यां यान्ति सन्मानवाः-
सज्जन लोग स्वर्ग जाते हैं।

तृतीया- येषां नास्ति समं द्यवा किमपि-
जिन्हें स्वर्ग के समान दूसरा कुछ नहीं है।

चतुर्थी- ते कुर्वन्ति पुण्यं द्यवे-
वे स्वर्ग के लिए पुण्य करते हैं।

पञ्चमी- राजा द्योः अमरः त्रिशंकुः अपतत्-
अमर राजा त्रिशंकु स्वर्ग से च्युत हो गये।

षष्ठी- योग्याः तु न द्योः समे-
स्वर्ग के योग्य सब नहीं होते।

सप्तमी- सर्वैः उष्यते एव तद्द्यवि सुरैः-
सभी देवता उस स्वर्ग में रहते हैं।

सम्बो.- द्यौः त्वं जनानुद्धर-
हे स्वर्ग! तुम लोगों का उद्धार करो।

"औ" नौः (नाव)

या नौरस्ति सरिच्चरी भ्रमति तामारुह्य नावं नरो,
नावोत्तीर्य नदीं व्रजन्ति मनुजा नावे सुरक्षेष्यते।
नावो नैव बहिः क्षिपेदवयवान् नावो गृहं वै जलं,
यायान्नावि न वारि हानिदमहो नौर्नॄन्नदीन्तारय।।२८।।

प्रथमा- या नौ अस्ति सरिच्चरी-
जो नाव नदी में चलती है

द्वितीया- भ्रमति ताम् आरुह्य नावं नरः-
उस नाव पर चढ़कर नर भ्रमण करता है।

तृतीया- नावा उत्तीर्य नदीं व्रजन्ति मनुजाः-
नाव से नदी पार करके लोग जाते हैं।

चतुर्थी- नावे सुरक्षा इष्यते-
नाव के लिए सुरक्षा चाहिए।

पञ्चमी- नावः न एव बहिः क्षिपेत् अवयवान्-
अवयवों (अंगों) को नाव से बाहर नहीं निकालना चाहिए।

षष्ठी- नावः गृहं वै जलम्-
नाव का घर जल है।

सप्तमी- यायात् नावि न वारि हानिदम्-
नाव में हानिकारक जल का प्रवेश नहीं होना चाहिए।

सम्बो.- अहो! नौः नॄन् नदीं तारय-
हे नाव! नरों को नदीपार करो।

अजन्तनपुंसकलिङ्गम्

"अ" ज्ञानम् (ज्ञान)

ज्ञानं श्रेष्ठतमं सुवस्तु भुवने ज्ञानं च कुर्युः सदा,
ज्ञानेनैव महीयते मनुसुतो ज्ञानाय कुर्याच्छ्रमम्।
ज्ञानान्नैव विशिष्यते किमपि कौ ज्ञानस्य कार्याऽर्चना,
ज्ञाने भक्तिसमन्विते हरिकृपा हे ज्ञान काशं कुरु।।२१।।

प्रथमा- ज्ञानं श्रेष्ठतमं सुवस्तु भुवने-
भुवन में ज्ञान सर्वश्रेष्ठ वस्तु है।

द्वितीया- ज्ञानं च कुर्युः सदा-
सदा ज्ञानार्जन करना चाहिए।

तृतीया- ज्ञानेन एव महीयते मनुसुतः-
मनुष्य ज्ञान से ही पूजित (पूजनीय) होता है।

चतुर्थी- ज्ञानाय कुर्यात् श्रमम्-
ज्ञान के लिए परिश्रम करना चाहिए।

पञ्चमी- ज्ञानात् न एव विशिष्यते किम् अपि कौ-
ज्ञान से श्रेष्ठ पृथ्वी पर दूसरा कुछ है ही नहीं।

षष्ठी- ज्ञानस्य कार्या अर्चना-
ज्ञान का अर्चन करना चाहिए।

सप्तमी- ज्ञाने भक्तिसमन्विते हरिकृपा-
ज्ञान के भक्ति युक्त होने पर हरिकृपा प्राप्त होती है।

सम्बो.- हे ज्ञान काशं कुरु-
हे ज्ञान! प्रकाश करो।

"अ" श्रीपा (धनरक्षक)

श्रीपं पाति सदा श्रियं सुमनसा श्रीपं श्रयन्ते जनाः,
श्रीपेनेह सुरक्ष्यते वसुमती श्रीपाय सा कामधुक्।
श्रीपान्नास्ति विना सुरक्षणमहो श्रीपस्य ना किङ्करः,
श्रीपे जीवति जीवितं जनदलं भो श्रीप! पाहि श्रियम्।।३०।।

प्रथमा- श्रीपं पाति सदा श्रियं सुमनसा-
श्रीरक्षक हमेशा मन से श्री (लक्ष्मी) की रक्षा करता है।

द्वितीया- श्रीपं श्रयन्ते जना:-
लोक श्रीरक्षक (धनवान्) का आश्रय लेते हैं।

तृतीया- श्रीपेन इह सुरक्ष्यते वसुमती-
श्रीरक्षक के द्वारा ही वसुमती (पृथ्वी) सुरक्षित रहती है।

चतुर्थी- श्रीपाय सा कामधुक्-
श्रीरक्षक के लिए वह (वसुमती या लक्ष्मी) कामधेनु है।

पञ्चमी- श्रीपात् नास्ति विना सुरक्षणम् अहो-
अरे! श्रीरक्षक के बिना सुरक्षा भी नहीं है।

षष्ठी- श्रीपस्य ना किङ्करः-
श्रीरक्षक का मनुष्य किंकर (नौकर) होता है।

सप्तमी- श्रीपे जीवति जीवितं जनदलम्-
श्रीरक्षक (धनी) के जीवित रहने पर ही जनसमूह भी जीवित है।

सम्बो.- भोः श्रीप! पाहि श्रियम्-
हे श्रीरक्षक! श्री की रक्षा करो।

"इ" वारि (जल)

गाङ्गं वारि पुनाति वै त्रिभुवनं तद् वारि रक्षेत् सदा,
नश्यन्तीह च वारिणा हि कलुषा गङ्गां व्रजेद् वारिणे।
तापो नश्यति वारिणः, स्मरणतः शुद्धा जना वारिणः,
तस्मिन् वारिणि सन्ति वै शुभगुणा भो वारि कुर्याः शुचिम्।।३१।।

प्रथमा- गाङ्गं वारि पुनाति वै त्रिभुवनम्-
तीनों लोकों को गंगाजल पवित्र करता है।

द्वितीया- तद् वारि रक्षेत् सदा-
उस जल की सदा रक्षा करनी चाहिए।

तृतीया- नश्यन्ति इह च वारिणा हि कलुषाः-
यहाँ (उस) जल से सम्पूर्ण कलुष (पाप) नष्ट हो जाते हैं।

चतुर्थी- गङ्गां व्रजेत् वारिणे-
(उस) जल के लिए गंगा में जाना चाहिए।

पञ्चमी- तापः नश्यति वारिणः-
(उस) वारि से ताप (सन्ताप) का शमन होता है।

षष्ठी- स्मरणतः शुद्धाः जनाः वारिणः-
(उस) वारि के स्मरण से ही लोग शुद्ध हो जाते हैं।

सप्तमी- तस्मिन् वारिणि सन्ति वै शुभगुणाः-
उस वारि में निश्चित ही शुभ गुण हैं।

सम्बो.- भोः वारि कुर्याः शुचिम्-
हे (गंगा) जल! पवित्र करो।

"इ" दधि (दही)

लोके सुन्दरभोजनं दधि सदा भक्षेच्च नूनं दधि,
दध्ना त्वोदनमश्नुते बटुगणो दध्ने पयोऽपेक्ष्यते।
दध्नः सम्प्रभवं घृतं रुचिकरं श्लाघ्याश्च दध्नो गुणाः,
स्वादो दध्नि च वर्तते ह्यतुलितस्त्वं देहि तुष्टिं दधि।।३२।।

प्रथमा- लोके सुन्दरभोजनं दधि सदा-
लोक में सुन्दर भोजन दधि है।

द्वितीया- भक्षेच्च नूनं दधि म१६४०८ॐ-.
दही अवश्य खाना चाहिए।

तृतीया- दध्ना तु ओदनम् अश्नुते बटुगणः-
बटु दही से भात खाते हैं।

चतुर्थी- दध्ने पयः अपेक्ष्यते-
दही के लिए दूध अपेक्षित है।

पञ्चमी- दध्नः सम्प्रभवं घृतं रुचिकरम्-
दही से रुचिकर घी उत्पन्न होता है।

षष्ठी- श्लाघ्याः च दध्नः गुणाः-
दही के गुण प्रशंसनीय हैं।

सप्तमी- स्वादः दध्नि च वर्तते ह्यतुलितः-
दही में अनुपम स्वाद है।

सम्बो.- त्वं देहि तुष्टिं दधि-
हे दही! तुम सन्तुष्टि प्रदान करो।।

"उ" वस्तु

विद्या वस्तु महच्च पूर्णभुवने तद् वस्तु संस्थापयेत्,
तुष्टो ना वरवस्तुना स्वसमयं दद्याच्च तद्वस्तुने।
तस्मान्नास्ति सुवस्तुनो भुवि परं तद्वस्तुनः काङ्क्षिणो,
लिप्ताः सन्तु समे सुवस्तुनि गृहे तिष्ठेः सदा वस्तु नः।।३३।।

प्रथमा- विद्या वस्तु महत् च पूर्णभुवने-
सम्पूर्ण भुवन में विद्या महत्त्वपूर्ण वस्तु है।

द्वितीया- तद् वस्तु संस्थापयेत्-
उस वस्तु को स्थापित करना चाहिए।

तृतीया- तुष्टः ना वरवस्तुना-
सुन्दर वस्तु से मनुष्य सन्तुष्ट रहता है।

चतुर्थी- स्वसमयं दद्यात् च तद्वस्तुने-
उस वस्तु के लिए अपना समय देना (लगाना) चाहिए।

पञ्चमी- तस्मात् नास्ति सुवस्तुनः भुवि परम्-
उस (विद्या) वस्तु से अतिरिक्त भू पर कुछ नहीं है।

षष्ठी- तद्वस्तुनः काङ्क्षिणः-
उस (विद्या) वस्तु के इच्छुक!

सप्तमी- लिप्ताः सन्तु समे सुवस्तुनि-
सभी सुवस्तु में लिप्त हो जावें।

सम्बो.- गृहे तिष्ठेः सदा वस्तु नः
हे वस्तु! तुम सदा हमलोगों के घर निवास करो।

"ऋ" धातृ (धाता)

ब्रह्मैकं च तदेव धातृ जगतो धातृ प्रबुद्धो भजेत्,
लोका येन हि धातृणा खलु धृतास्तस्मै नमो धातृणे।
उत्पन्नं किल धातुणो जगदिदं रूपं समं धातृणः,
तस्मिन् धातृणि यान्ति सर्वमनुजा भो धातृ कौ काशताम्।।३४।।

प्रथमा- ब्रह्म एकं च तदेव धातृ जगतः-
ब्रह्म एक है और वही जगत् को धारण करता है।

द्वितीया- धातृ प्रबुद्धो भजेत्-
प्रबुद्धों को धाता का भजन करना चाहिए।

तृतीया- लोकाः येन हि धातृणा खलु धृताः-
ये लोक जिस धाता के द्वारा धारण किये गये हैं।

चतुर्थी- तस्मै नमः धातृणे-
उस धाता को नमस्कार है।

पञ्चमी- उत्पन्नं किल धातृणः जगत् इदम्-
यह जगत् धाता से ही उत्पन्न है।

षष्ठी- रूपं समं धातृणः-
(जो कुछ दिखाई दे रहा है) सब धाता का ही रूप है।

सप्तमी- तस्मिन् धातृणि यान्ति सर्वमनुजाः-
(प्रलयावस्था में) उसी धाता में सारे मनुष्य विलीन हो जाते हैं।

सम्बो.- भो (भोः) धातृ कौ काशताम्-
हे धाता! पृथ्वी पर प्रकाशित होवो।

हलन्तपुँल्लिङ्गप्रकरणम्

सुहृद् - शब्दः (मित्र)

श्लाघ्यो मेऽस्ति सुहृद् महान् च सुहृदं जानन्तु सर्वेऽपि तम्,
लोकेऽस्मिन् सुहृदा सदा स्वसुहृदे स्वस्ति प्रभोः प्रार्थ्यताम्।
भेतव्यं सुहृदोऽत्र नैव सुहृदः क्षेमं ध्रुवं चिन्तयेत्,
स्निह्यन्त्वत्र जनाः समे सुहृदि भो स्नेहं सुहृद् देहि नः।।३५।।

प्रथमा- श्लाघ्यो मेऽस्ति सुहृद् महान् च-
मेरा मित्र महान् एवं प्रशंसनीय है।

द्वितीया- सुहृदं जानन्तु सर्वेऽपि तम्-
उस मित्र को सबलोग जानें।

तृतीया- लोकेऽस्मिन् सुहृदा सदा-
इस लोक में हमेशा मित्र के द्वारा-

चतुर्थी- स्वसुहृदे स्वस्ति प्रभोः प्रार्थ्यताम्-
अपने मित्र के लिए प्रभु से मंगल की कामना करनी चाहिये।

पञ्चमी- भेतव्यं सुहृदोऽत्र नैव-
मित्र से यहाँ भय नहीं होना चाहिये।

षष्ठी- सुहृदः क्षेमं ध्रुवं चिन्तयेत्-
मित्र के क्षेम का अवश्य चिन्तन करना चाहिये।

सप्तमी- स्निह्यन्त्वत्र जनाः समे सुहृदि-
सब लोग अपने मित्र से स्नेह करें।

सम्बो.- स्नेहं सुहृद् देहि नः-
हे मित्र! हमें स्नेह दो

राजन् (राजा)

राजा पालयति प्रजाः स्वसुतवद् राजानमिच्छन्ति ता,
राज्ञा सञ्चलतीह राज्यमखिलं राज्ञे नमन्ति प्रजाः।
राज्ञो राज्यसुरक्षणं निगदितं राज्ञोऽस्ति मानः सदा,
राज्ञि प्रेम निजप्रजाः प्रति सदा राजन् प्रजाः पालय।।३६।।

प्रथमा- राजा पालयति प्रजाः स्वसुतवत्-
राजा पुत्रवत् प्रजाओं का पालन करता है।

द्वितीया- राजानम् इच्छन्ति ताः-
वे प्रजायें (भी) राजा को चाहती हैं।

तृतीया- राज्ञा सञ्चलति इह राज्यम् अखिलम्-
अखिलराज्य का सञ्चालन राजा के द्वारा ही होता है।

चतुर्थी- राज्ञे नमन्ति प्रजाः-
राजा को प्रजा नमन करती है।

पञ्चमी- राज्ञः राज्यसुरक्षणं निगदितम्-
राजा से ही राज्य की सुरक्षा बतायी गयी है।

षष्ठी- राज्ञः अस्ति मानः सदा-
राजा का सम्मान हमेशा है।

सप्तमी- राज्ञि प्रेम निजप्रजाः प्रति सदा-
अपनी प्रजाओं के प्रति राजा का प्रेम सदा बना रहता है।

सम्बो.- राजन् प्रजाः पालय-
हे राजन्! प्रजाओं का पालन करो।

चक्रिन् - शब्दः (विष्णु)

चक्री पालयतेऽखिलं जगदिदं भक्त्या भजेच्चक्रिणम्,
पृथ्वीयं प्रभुचक्रिणा किल धृता कार्या नतिश्चक्रिणे।
लोकोऽभूदिह चक्रिणश्च सकलो भक्ताः! समे चक्रिणः,
तस्मिन् चक्रिणि यात्ययं च विलयं चक्रिन् सदा पाहि माम्।।३७।।

प्रथमा- चक्री पालयतेऽखिलं जगदिदं-
इस सम्पूर्ण जगत् का पालन चक्री (विष्णु) करते हैं।

द्वितीया- भक्त्या भजेच्चक्रिणम्-
भक्तिपूर्वक चक्री का भजन करना चाहिये।

तृतीया- पृथ्वीयं प्रभुचक्रिणा किल धृता-
यह पृथ्वी प्रभु चक्री के द्वारा धारण की गयी है।

चतुर्थी- कार्या नतिश्चक्रिणे-
चक्री के लिए नमस्कार करना चाहिये।

पञ्चमी- लोकोऽभूदिह चक्रिणश्च सकलः-
सम्पूर्ण लोक यहाँ चक्री से ही उत्पन्न हुआ है।

षष्ठी- भक्ताः समे चक्रिणः-
हे चक्री के सम्पूर्ण भक्तों!

सप्तमी- तस्मिन् चक्रिणि यात्ययं च विलयम्-
उसी चक्री में यह (लोक) विलय को प्राप्त होता है।

सम्बो.- चक्रिन् सदा पाहि माम्-
हे चक्री! हमलोगों की रक्षा करो।

युवन् - शब्दः (युवा)

धर्मं रक्षति यो युवा स तमवेद् धर्मो युवानं सदा,
यूना भाति धरातलं च निखिलं यूने सुशिक्षेष्यते।
यूनो दुष्टदलं विभेति सकलं यूनो बलं राष्ट्रपम्,
रक्षार्थं भुवि यूनि शक्तिरतुला धर्मं सुरक्षेः युवन्।।३८।।

प्रथमा- धर्मं रक्षति यो युवा-
जो युवक धर्म की रक्षा करता है।

द्वितीया- स तमवेद् धर्मो युवानं सदा-
वह धर्म हमेशा उस युवक की रक्षा करता है।

तृतीया- यूना भाति धरातलं च निखिलम्-
सम्पूर्ण धरातल युवक से सुशोभित होता है।

चतुर्थी- यूने सुशिक्षेष्यते-
युवा के लिए अच्छी शिक्षा चाहिए।

पञ्चमी- यूनो दुष्टलं विभेति सकलम्-
युवा से सकल दुष्टसमूह डरता है।

षष्ठी- यूनो बलं राष्ट्रपम्-
युवा का बल राष्ट्र की रक्षा करने वाला होता है।

सप्तमी- रक्षार्थं भुवि यूनि शक्तिरतुला-
रक्षा के लिए पृथ्वी पर युवा की शक्ति अतुलनीय है।

सम्बो.- धर्मं सुरक्षेः युवन्-
हे युवक! धर्म की रक्षा करो।

आत्मन्-शब्दः (आत्मा)

आत्मा जन्मजराविनाशरहितोऽस्त्यात्मानमीशं भजे,
दीप्तं येन सदात्मना जगदिदं तस्मै नमोऽस्त्वात्मने।
लोके जीवनमात्मनो नहि विना लीला विचित्रात्मनः,
कष्टं नैव विधेयमात्मनि निजे आत्मन् जनानुद्धर।।३१।।

प्रथमा- आत्मा जन्मजराविनाशरहितोऽस्ति-
आत्मा जन्म, जरा (बुढ़ापा) एवं विनाश से रहित है।

द्वितीया- आत्मानमीशं भजे-
आत्मरूप ईश्वर का मैं भजन करता हूँ।

तृतीया- दीप्तं येन सदात्मना जगदिदम्-
यह संसार जिस आत्मा के द्वारा सदा प्रकाशित है।

चतुर्थी- तस्मै नमोऽस्त्वात्मने-
उस आत्मा को नमस्कार है।

पञ्चमी- लोके जीवनमात्मनो नहि विना-
लोक में आत्मा के विना जीवन सम्भव नहीं है।

षष्ठी- लीला विचित्रात्मनः-
आत्मा की लीला विचित्र है।

सप्तमी- कष्टं नैव विधेयमात्मनि निजे-
अपनी आत्मा में कष्ट नहीं पहुँचाना चाहिये।

सम्बो.- आत्मन्! जनानुद्धर-
हे आत्मा! लोगों का उद्धार करो।

''पथिन्'' - शब्दः (मार्ग)

पन्था यः सुगमः शिवश्च सततं पन्थानमायान्तु तम्,
याता येन पथा महाजनरथाः तस्मै पथे यत्यताम्।
नैवाभाति सतः पथोऽत्र पतितो बोधो विधेयः पथः,
पूज्यन्ते पथि संस्थिताः सति जनाः सर्वं सहिष्णुः पथिन्।।४०।।

प्रथमा- पन्था यः सुगमः शिवश्च सततम्-
जो मार्ग सुगम और हमेशा कल्याणकारी है।

द्वितीया- पन्थानमायान्तु तम्-
उस मार्ग पर चलें।

तृतीया- याता येन पथा महाजनरथाः-
जिस मार्ग से महापुरुष गये।

चतुर्थी- तस्मै पथे यत्यताम्-
उस मार्ग के लिए प्रयत्न करना चाहिये।

पञ्चमी- नैवाभाति सतः पथोऽत्र पतितः-
सन्मार्ग से भ्रष्ट सुशोभित नहीं होता।

षष्ठी- बोधो विधेयः पथः-
मार्ग का ज्ञान रखना चाहिये।

सप्तमी- पूज्यन्ते पथि संस्थिताः सति जनाः-
सन्मार्ग पर स्थित लोग पूजित होते हैं।

सम्बो.- सर्वं सहिष्णुः पथिन्-
हे मार्ग- तुम सब कुछ सहने वाले हो। सर्व सहिष्णु हो।

पूषन् - शब्दः (सूर्य)

पूषा पोषयते भुवं प्रतिदिनं पूषाणमाराधयेत्,
पूष्णा पोषितमस्त्यदस्त्रिभुवनं पूष्णे नमः सादरम्।
पूष्णो याति तमो विनाशमखिलं पूष्णः प्रकाशो महान्,
दिव्यः पूष्णि गुणो जगद्धितकरः पूषन् जगत् पोषय।।४१।।

प्रथमा- पूषा पोषयते भुवं प्रतिदिनम्-
प्रतिदिन पूषा (सूर्य) भुवन का पोषण करता है।

द्वितीया- पूषाणमाराधयेत्-
पूषा की आराधना करनी चाहिये।

तृतीया- पूष्णा पोषितमस्त्यदस्त्रिभुवनम्-
तीनों लोक पूषा से ही पोषित हैं।

चतुर्थी- पूष्णे नमः सादरम्-
पूषा को आदरपूर्वक नमन है।

पञ्चमी- पूष्णो याति तमो विनाशमखिलम्-
पूषा से सम्पूर्ण अन्धकार विनाश को प्राप्त कर लेता है।

षष्ठी- पूष्णः प्रकाशो महान्-
पूषा का प्रकाश महान् है-

सप्तमी- दिव्यः पूष्णि गुणो जगद्धितकरः-
पूषा में जगत के लिए कल्याणकारी एवं दिव्य गुण हैं।

सम्बो.- पूषन् जगत् पोषय-
हे पूषन्! जगत् का पोषण करो।

श्वन् - शब्दः (कुत्ता)

श्वा पाल्यः पशुरस्ति सर्वविदितः श्वानं गृहे पालयेत्,
तुष्टाः सन्ति शुनाऽधुना बहुजनाः स्नेहः शुने रोचते।
चौरा भीतियुता भवन्ति च शुनो रक्षा विधेया शुनो,
रम्याः सन्ति गुणाः समे शुनि सदा हे श्वन् गृहं गोपय।।४२।।

प्रथमा- श्वा पाल्यः पशुरस्ति सर्वविदितः-
श्वा (कुत्ता) पालने योग्य सर्वविदित पशु है।

द्वितीया- श्वानं गृहे पालयेत्-
घर में कुत्ता को पालना चाहिये।

तृतीया- तुष्टाः सन्ति शुनाऽधुना बहुजनाः-
आजकल बहुत लोग कुत्ते से सन्तुष्ट हैं।

चतुर्थी- स्नेहः शुने रोचते-
कुत्ता को स्नेह अच्छा लगता है।

पञ्चमी- चौरा भीतियुता भवन्ति च शुनः-
कुत्ते से चोर डर जाते हैं।

षष्ठी- रक्षा विधेया शुनः-
कुत्ते की रक्षा करनी चाहिये।

सप्तमी- सौम्याः सन्ति गुणाः समे शुनि सदा-
कुत्ते में सभी रम्य गुण हैं।

सम्बो.- हे श्वन् गृहं गोपय-
हे श्वन्! घर की रक्षा करो।

विद्वस् - शब्दः (विद्वान्)

विद्वान् वेत्ति समग्रशास्त्रमतुलं विद्वांसमावासयेत्,
दीप्ताभूर्विदुषा सदैव विदुषे कुर्यान्नतिं नित्यशः।
देशोऽयं विदुषो विना न, विदुषः सेवा विधेया समैः,
विद्याः सन्ति सुरक्षिता विदुषि ता विद्वन् जगद् बोधय।।४३।।

प्रथमा- विद्वान् वेत्ति समग्रशास्त्रमतुलम्-
विद्वान् अतुलनीय समग्रशास्त्रों को जानते हैं।

द्वितीया- विद्वांसमावासयेत्-
विद्वान् को बसाना चाहिये।

तृतीया- दीप्ताभूर्विदुषा सदैव-
हमेशा ही पृथ्वी विद्वान् से शोभित रहती है।

चतुर्थी- विदुषे कुर्यान्नतिं नित्यशः-
विद्वान् को सर्वदा नमस्कार करना चाहिये।

पञ्चमी- देशोऽयं विदुषो विना न-
विद्वान् के बिना यह देश है ही नहीं।

षष्ठी- विदुषः सेवा विधेया समैः-
सबको विद्वान् की सेवा करनी चाहिये।

सप्तमी- विद्याः सन्ति सुरक्षिता विदुषि ताः-
विद्वान् में ही विद्यायें सुरक्षित हैं, उनको

सम्बो.- विद्वन् जगद् बोधय-
हे विद्वन्! जगत् को बोधित करो।

वेधस् - शब्दः (ब्रह्मा)

वेधा लोकपतिः सदा विजयते भक्त्या भजे वेधसम्,
सृष्टा येन हि वेधसा वसुमती तस्मै नमो वेधसे।
दैत्या बिभ्यति वेधसोऽत्र सुतरां सर्वं जगद् वेधसः,
श्रीमद्वेधसि योजयेन्निजमनो वेधस्त्वया राज्यताम्।।४४।।

प्रथमा- वेधा लोकपतिः सदा विजयते-
लोकपति ब्रह्मा की सदा विजय होती है।

द्वितीया- भक्त्या भजे वेधसम्-
भक्तिपूर्वक ब्रह्मा को भजता हूँ।

तृतीया- सृष्टा येन हि वेधसा वसुमती-
यह पृथ्वी जिस ब्रह्मा के द्वारा बनायी गयी है।

चतुर्थी- तस्मै नमो वेधसे-
उस ब्रह्मा को नमस्कार है।

पञ्चमी- दैत्या बिभ्यति वेधसोऽत्र सुतराम्-
दैत्य लोग हमेशा ब्रह्मा से डरते हैं।

षष्ठी- सर्वं जगद् वेधसः-
सारा संसार ब्रह्मा का है।

सप्तमी- श्रीमद्वेधसि योजयेन्निजमनः-
श्रीमान् ब्रह्मा में अपने मन को लगाना चाहिये।

सम्बो.- वेधस्त्वया राज्यताम्-
हे ब्रह्मा जी! आप की जय हो।

विश्ववाह् - शब्दः (विश्व का वहन करने वाला)

सम्मान्यो भुवि विश्वराड्ढरिरयं तं विश्ववाहं नुमो,
विश्वौहा रचितं जगल्लसति विश्वौहे प्रजा रोजते।
विश्वौहश्च पृथक् न शान्तिरिह विश्वौहः कृपा प्राप्यताम्,
विश्वौहि प्रचुरा गुणा हितकरा हे विश्ववाडाभर।।४५।।

प्रथमा- सम्मान्यो भुवि विश्वराड्ढरिरयम् (विश्वराड् हरिः अयम्)-
भूलोक में सम्माननीय हरि विश्वराट् हैं।

द्वितीया- तं विश्ववाहं नुमः-
उस विश्ववाह को नमन करते हैं।

तृतीया- विश्वौहा रचितं जगल्लसति-
विश्ववाट् के द्वारा रचित जगत् शोभित हो रहा है।

चतुर्थी- विश्वौहे प्रजा रोचते-
विश्ववाट् को प्रजा अच्छी लगती है।

पञ्चमी- विश्वौहश्च पृथक् न शान्तिरिह-
विश्ववाट् से पृथक् यहाँ शान्ति नहीं है।

षष्ठी- विश्वौहः कृपा प्राप्यताम्-
विश्ववाट् की कृपा प्राप्त करनी चाहिये।

सप्तमी- विश्वौहि प्रचुरा गुणा हितकराः-
विश्ववाट् में हितकर गुण अधिक हैं।

सम्बो.- हे विश्ववाडाभर (विश्ववाड् आभर)-
हे विश्ववाट्! भरण करो।

हलन्तस्त्रीलिङ्गप्रकरणम्

वाच् - शब्दः (वाणी)

तेषां वाक् सफलाऽस्ति येऽत्र मनसा वाचं सदोपासते,
वाचा ते सकलं लभन्ति लषितं वाचे कृता यैः श्रमाः।
वाचो नास्ति विना स्थितिश्च जगतो वाचो महत्त्वं बहु,
सर्वं वाचि सुसंस्थितं त्रिभुवने हे वाक्! वृता नो भव।।४६।।

प्रथमा- तेषां वाक् सफलाऽस्ति-
उनकी वाणी सफल है।

द्वितीया- येऽत्र मनसा वाचं सदोपासते-
जो यहाँ मन से हमेशा वाणी की उपासना करते हैं।

तृतीया- वाचा ते सकलं लभन्ति लषितम्-
वे वाणी के द्वारा सम्पूर्ण अभीष्ट को प्राप्त कर लेते हैं।

चतुर्थी- वाचे कृता यैः श्रमाः-
जिन लोगों ने वाणी के लिए श्रम किये हैं।

पञ्चमी- वाचो नास्ति विना स्थितिश्च जगतः-
जगत् की स्थिति वाणी के बिना नहीं है।

षष्ठी- वाचो महत्त्वं बहु-
वाणी का बहुत महत्त्व है।

सप्तमी- सर्वं वाचि सुसंस्थितं त्रिभुवने-
तीनों लोकों में सब कुछ वाणी में ही स्थित है।

सम्बो.- हे वाक् वृता नो भव-
हे वाणी! हमारे लिए प्रकाशित होवो।

स्त्रज् - शब्दः (माला)

कण्ठे स्त्रक् तव शोभते शृणु विभो मोदस्व वीक्ष्य स्त्रजम्,
शून्यं भाति वपुः स्त्रजा विरहितं ध्यानं स्त्रजे दीयताम्।
रत्नं नैव पतेत् स्त्रजः कथमपि प्राधान्यमस्ति स्त्रजः,
वैशिष्ट्यं स्त्रजि विद्यते बहुविधं स्त्रग् भो शुभं देहि नः।।४७।।

प्रथमा- कण्ठे स्त्रक् तव शोभते शृणु विभो-
तुम्हारे कण्ठ में माला सुन्दर लग रही है। सुनो, विभो!

द्वितीया- मोदस्व वीक्ष्य स्त्रजम्-
प्रसन्न होवो माला को देखकर।

तृतीया- शून्यं भाति वपुः स्त्रजा विरहितम्-
माला से रहित शरीर शून्य-सा प्रतीत होता है।

चतुर्थी- ध्यानं स्त्रजे दीयताम्-
माला के लिए ध्यान देना चाहिए।

पञ्चमी- रत्नं नैव पतेत् स्त्रजः कथमपि-
माला से रत्न किसी तरह न गिरे।

षष्ठी- प्राधान्यमस्ति स्त्रजः
माला की प्रधानता है।

सप्तमी- वैशिष्ट्यं स्त्रजि विद्यते बहुविधम्-
माला में अनेक प्रकार की विशेषतायें हैं।

सम्बो.- स्त्रग् भो शुभं देहि नः-
हे माला! हमारे लिए मंगल प्रदान करो।

गिर् - शब्दः (वाणी)

दिव्या गीरिह संस्कृतं त्रिभुवने विद्याद् गिरं संस्कृतम्*,
शोभन्ते सकला बुधा भुवि गिराऽभ्यासो विधेयो गिरे।
संसारोऽस्ति गिरो विना तिमिरयुग् दोषो गिरो हीयताम्,
तेजः स्थापय शाश्वतं निजगिरि स्नेहाऽत्र गीस्तन्यताम्।।४८।।

प्रथमा- दिव्या गीरिह संस्कृतं त्रिभुवने-
इस त्रिभुवन में दिव्य वाणी संस्कृत है।

द्वितीया- विद्याद् गिरं संस्कृतम्-
संस्कृत भाषा को जानना चाहिये।

तृतीया- शोभन्ते सकला बुधा भुवि गिरा-
पृथ्वी पर सभी बुधजन वाणी से सुशोभित होते हैं।

चतुर्थी- अभ्यासो विधेयो गिरे-
वाणी के लिए अभ्यास करना चाहिये।

पञ्चमी- संसारोऽस्ति गिरो विना तिमिरयुक्-
वाणी के बिना संसार तिमिरयुक्त (अन्धकारमय) है।

षष्ठी- दोषो गिरो हीयताम्-
वाणी के दोष का त्याग कर देना चाहिये।

सप्तमी- तेजः स्थापय शाश्वतं निजगिरि-
अपनी वाणी में शाश्वत तेज स्थापित करो।

सम्बो.- स्नेहोऽत्र गीस्तन्यताम्-
हे वाणी! स्नेह का विस्तार करो।

---

* संस्कृतं नाम दैवीवाग्, न तु विशेषणम्।

दिश् - शब्दः (दिशा)

एका दिग् भवति प्रसिद्धिबलतो विद्यादनेकां दिशम्,
लोका यान्ति यया दिशा सफलतां यत्नोऽस्तु तस्यै दिशे।
भ्रान्तो नैव विभूषितो निजदिशो ध्यानं दिशो दीयताम्,
सर्वस्यां दिशि राजतां बुधजनो युक्तं गुणं देहि दिक्।।४९।।

प्रथमा- एका दिग् भवति-
दिशा एक होती है।

द्वितीया- प्रसिद्धिबलतः विद्यादनेकां दिशम्-
प्रसिद्धि (व्यवहार) के बल से दिशा को अनेक जानना चाहिये।

तृतीया- लोकायान्ति यया दिशा सफलताम्-
लोक जिस दिशा से सफलता को प्राप्त करते हैं।

चतुर्थी- यत्नोऽस्तु तस्यै. दिशे-
उस दिशा के लिए प्रयत्न हो।

पञ्चमी- भ्रान्तो नैव विभूषितो निजदिशः-
अपनी दिशा से भ्रान्त विभूषित नहीं होता।

षष्ठी- ध्यानं दिशो दीयताम्-
दिशा का ध्यान रखना चाहिये।

सप्तमी- सर्वस्यां दिशि राजतां बुधजनः-
सभी दिशा में विद्वान् राज करें।

सम्बो.- युक्तं गुणं देहि दिक्-
हे दिक्! उपयुक्त गुण प्रदान करो।

हलन्तनपुंसकलिङ्गप्रकरणम्

धनुष् - शब्दः (धनुष)

रामस्यास्ति धनुः करेऽरिदमनं कस्तद् धनुर्वेत्ति नो?
नष्टा यद्धनुषा तदीयधनुषे दुष्टा नमस्कुर्वते।
रक्षस्तद्धनुषो विभेति धनुषोऽद्यापि प्रतापो महान्,
दिव्येऽस्मिन् धनुषि प्रकर्षनिकरोऽस्मान् त्वं धनू रक्ष भोः।।५०।।

प्रथमा- रामस्यास्ति धनुः करेऽरिदमनम्-
राम के हाथ में शत्रुओं का दमन करने वाला धनुष है।

द्वितीया- कस्तद् धनुर्वेत्ति नो-
उस धनुष को कौन नहीं जानता?

तृतीया- नष्टा यद्धनुषा-
जिस धनुष से (दुष्ट) नष्ट हुए,

चतुर्थी- तदीयधनुषे दुष्टा नमस्कुर्वते-
उस धनुष को दुष्ट लोग नमस्कार करते हैं।

पञ्चमी- रक्षस्तद्धनुषो विभेति-
उस धनुष से राक्षस डरते हैं।

षष्ठी- धनुषोऽद्यापि प्रतापो महान्-
आज भी धनुष का प्रताप महान् है।

सप्तमी- दिव्येऽस्मिन् धनुषि प्रकर्षनिकरः-
इस दिव्य धनुष में प्रकर्षों का समूह है।

सम्बो.- अस्मान् त्वं धनू रक्ष भोः-
हे धनुष! हमारी रक्षा करो।

चक्षुष्-शब्दः (नेत्र)

चक्षू रक्षति जीवनं यदि वरं, चक्षुः सुरक्षेज्जनः,
हीनो ना नहि यक्षुषाऽस्ति सफलो रक्षेष्यते चक्षुषे।
घोरं कष्टमिहास्ति चक्षुष ऋते भव्या स्थितिः चक्षुषः,
दृष्टिश्चक्षुषि वर्धतां समनृणां चक्षुः चकास्ताद् ध्रुवम्।।५१।।

प्रथमा- चक्षू रक्षति जीवनं यदि वरम्-
यदि चक्षु ठीक है, तो जीवन की रक्षा करता है।

द्वितीया- चक्षुः सुरक्षेज्जनः-
मनुष्य आँख की रक्षा करे।

तृतीया- हीनो ना नहि चक्षुषाऽस्ति सफलः-
चक्षु से हीन पुरुष सफल नहीं है।

चतुर्थी- रक्षेष्यते चक्षुषे-
चक्षु के लिए सुरक्षा चाहिये।

पञ्चमी- घोरं कष्टमिहास्ति चक्षुषऋते-
यहाँ चक्षु के बिना घोर कष्ट है।

षष्ठी- भव्या स्थितिः चक्षुषः-
चक्षु की स्थिति कल्याणकारी है।

सप्तमी- दृष्टिश्चक्षुषि वर्धतां समनृणाम्-
सभी लोगों के चक्षु की दृष्टि बढ़े।

सम्बो.- चक्षुः चकास्ताद् ध्रुवम्-
हे चक्षु! निश्चित दीप्त होवो।

चेतस् - शब्दः (मन)

चेतश्चेद् विजितं जितं च सकलं चेतस्सदा शोधयेत्,
यः सर्वं शुचिचेतसा प्रकुरुते तस्यानतिश्चेतसे।
श्रेष्ठं वस्तु न चेतसः किमपि कौ वेगो द्रुतश्चेतसः,
चिन्ता चेतसि जायते न विमले चेतो वशं नो भव।।५२।।

प्रथमा- चेतश्चेद् विजितं जितञ्च सकलम्-
यदि मन को जित लिया तो सब कुछ जित लिया।

द्वितीया- चेतः सदा शोधयेत्-
मन को हमेशा शोधित (नियमित) करना चाहिये।

तृतीया- यः सर्वं शुचिचेतसा प्रकुरुते-
जो सब कुछ शुद्ध मन से करता है।

चतुर्थी- तस्यानतिश्चेतसे-
उसके मन को नमन है।

पञ्चमी- श्रेष्ठं वस्तु न चेतसः किमपि कौ-
पृथ्वी पर मन से श्रेष्ठ कोई वस्तु नहीं है।

षष्ठी- वेगो द्रुतश्चेतसः-
मन का वेग तीव्र है।

सप्तमी- चिन्ता चेतसि जायते न विमले-
शुद्ध मन में चिन्ता नहीं होती है।

सम्बो.- चेतो वशं नो भव-
हे मन! हमारे वश में होवो।

उपसंहारः

पुम्स्-शब्दः

पुमान् पुमांसं परिपातु नित्यम्,
पुंसा हि पुंसे सुमतिर्विधेया।
पुंसोऽत्र पुंसो न भवेच्च भीतिः,
पुंसि विपत्तिर्नभवेत् पुमन् हे।।५३।।

प्रथमा+ द्वितीया — पुमान् पुमांसं परिपातु नित्यम्- मनुष्य मनुष्य की हमेशा रक्षा करे।

तृतीया+ चतुर्थी — पुंसा हि पुंसे सुमतिर्विधेया- मनुष्य मनुष्य के लिए अच्छी मति (बुद्धि) रखे।

पंचमी+ षष्ठी — पुंसोऽत्र पुंसो न भवेच्च भीतिः- मनुष्य से मनुष्य को यहाँ कहीं भी भय न हो।

सप्तमी+ सम्बो. — पुंसि विपत्तिर्न भवेत् पुमन् हे- हे मानव! मानव के ऊपर विपत्ति न पड़े।

हरि -शब्दः (ईश्वर)

हरिर्व्याप्तो नित्यं समभुवि भजामो बुधहरिम्,
हरेः सर्वा सृष्टिः प्रभवति नमोऽस्त्वीशहरये।
हरेरंशाः सर्वे किल विरचितास्ते च हरिणा,
हरौ लिप्ता सृष्टिर्भवति सुर नस्तारय हरे।।५४।।

हरिर्व्याप्तो नित्यं समभुवि - समस्त भू पर नित्य हरि व्याप्त हैं।
भजामो बुधहरिम्- बुध हरि का हम भजन करते हैं।
हरेः सर्वा सृष्टिः प्रभवति- हरि से सम्पूर्णसृष्टि प्रादुर्भूत होती है।
नमोस्त्वीशहरये- ईश्वर हरि को नमन है।
हरेरंशाः सर्वे किल- सब हरि के ही अंश हैं और
विरचितास्ते च हरिणा- हरि के द्वारा वे विरचित हैं।
हरौ लिप्ता सृष्टिः भवति- हरि में सृष्टि लिप्त हो जाती है।
सुर नस्तारय हरे- हे सुर! हे हरे! हमें तारो। हमारा उद्धार करो।

यस्यै सर्वं यतः सर्वं यत् सर्वं सर्वतश्च या।
तस्यै पद्यात्मकं पुष्पमर्प्यति प्रीयतामसौ।।५५।।

जिसके लिए सब कुछ है, जिससे सब कुछ है, जो सब कुछ है और जो सभी ओर है, उस आदिशक्ति को यह पद्यात्मक पुष्पगुच्छ समर्पित है, वे भगवती प्रसन्न हों।

।।ॐ सिंहासिन्यष्टकम्।।*

(सिंहासिनी नामक एक देवी इसी देश में बिहार प्रदेशान्तर्गत गोपालगंज जिला के थावे नामक ग्राम में विराजमान हैं, जिनके विषय में सुना जाता है तथा वहाँ के प्राचीन दुर्ग (किला), वन एवं मन्दिर भी प्रमाणित करते हैं कि एक बार हथुआराज्य के तत्कालीन राजा की कुल देवी भगवती जगृदम्बा को प्रसन्न कर रहसु नामक एक भक्त ने माँ से अनेक सिद्धियाँ प्राप्त कर ली। वह प्रतिदिन जंगल में सापों की रस्सी बनाकर बाघों को उसमें बाँधकर तृणों का मर्दन करता था तथा तृणों से मनोनुकूल धान्य आदि अन्न प्राप्त करता था। एक दिन यह सूचना पाकर राजा ने स्वयं जाकर इस चमत्कार को देखा तथा इसके कारण को जानकर देवी से साक्षात्कार कराने की इच्छा व्यक्त की। लेकिन रहसु ने नकारात्मक उत्तर दिया। फिर भी राजा ने सर्वसम्पत्तित्यागपूर्वक भगवती के दर्शन की जिद्द कर ली। अन्त में माँ भगवती ने रहसु का मस्तक चिड़कर वलययुक्त अपना हाथ दिखलाया तथा दोनों का उद्धार किया। तब से यह स्थल शक्तिपीठ के रूप में सुख्यात है। आज भी यहाँ प्रतिदिन माँ के दर्शन-पूजन के लिए महान जन समुदाय एकत्रित होता है। चैत्र एवं आश्विन मास में विशेष रूप से यहाँ मेला लगता है जो पूर्ण मास तक रहता है। उन्हीं जगत जननी, माँ जगदम्बा के चरणकमलों में यह अष्टक समर्पित है।)

हिन्दुस्थानमहीतले सुविदितं राज्यं विहारस्तुनः,
तस्मिन्नेकसुमण्डलं परिचितं गोपालगंजं शुभम्।
एतस्यैव सुमण्डलस्य महतः ख्यातस्य रम्यस्य वै,
थावेधामनिवासिनी भगवती सिंहासिनी पातु नः।।

---

* सिंहासिनी इति देव्याः संज्ञा।

भारत देश की इस पवित्र भूमिं पर सुशोभित बिहार राज्य के अन्तर्गत सुप्रसिद्ध एवं रमणीय जिला गोपालगंज में स्थित थावे धाम में निवास करने वाली भवगती सिंहासिनी देवी हमलोगों की रक्षा करें।

श्रीब्रह्मादिसुरार्चिता त्रिनयना रक्ताम्बरैर्वेष्टिता,
नानाभूषणभूषिता मृगपतिस्कन्धस्थिता चाम्बिका।
पद्मस्था प्रबलाऽखिला च विमलाऽनन्ता शिवा शङ्करी,
थावेधामनिवासिनी भगवती सिंहासिनी पातु नः।।२।।

ब्रह्मादि देवताओं से पूजित, तीन नेत्रों वाली, लाल वस्त्रों से सुशोभित, अनेकविध आभूषणों से विभूषित, कमलासना, सिंह पर आरूढ़ (सवार), अत्यन्त शक्तिशाली, अखिल, विमल, आदि-अन्तरहित (अनन्ता), एवं सदा कल्याण करने वाली थावेधामनिवासिनी भगवती सिंहासिनी हमलोगों की रक्षा करें।

माता नः शुभदा सदा विजयदा ज्ञानप्रदा शक्तिदा,
विद्यादा सुखदाऽनिशं सुवरदा कान्तिप्रदा शान्तिदा।
सद्बुद्धिप्रद- भुक्तिमुक्ति-लयदा कल्याणमार्गप्रदा,
थावेधामनिवासिनी भगवती सिंहासिनी पातु नः।।३।।

भक्तों को हमेशा मंगल प्रदान करने वाली, सर्वत्र विजय दिलानेवाली, ज्ञानदेने वाली, शक्ति देने वाली, सभी विद्याओं को प्रदान करने वाली, सर्वविध सुख देनेवाली, मनोभिलषित वरदान की हेतु, कान्ति एवं शान्ति प्रदान करनेवाली, भुक्ति (भोग) एवं मुक्ति (मोक्ष) देने वाली, जड़-चेतन सबमें मधुर संगीत का संचार करनेवाली तथा कल्याण के मार्ग प्रशस्त करने वाली थावे धाम में

विराजमान माँ जगज्जननी जगदम्बा भगवती सिंहासिनी हमलोगों की रक्षा करें।

वृद्ध्यृद्धिप्रदसिद्धिदा शरणदा गोदा च मोदप्रदा,
आयुर्दा सुगतिप्रदा सुमतिदा धर्मार्थकामप्रदा।
देवी तुष्टि-सुभक्ति पुष्टिगुणदा शुद्धा प्रबुद्धेश्वरी,
थावेधामनिवासिनी भगवती सिंहासिनी पातु नः।।४।।

ऋद्धि-सिद्धि एवं समृद्धि प्रदान करनेवाली, अपनी शरण में सबको स्थान देकर सदा सन्तुष्ट करनेवाली, सर्वविध सम्पत्तिप्रदान करनेवाली, सबको प्रसन्न करने वाली, आयु, सुगति, सुमति, धर्म, अर्थ एवं काम आदि प्रदान करने वाली तथा तुष्टि-पुष्टि (बल) एवं सद्‌गुण के साथ-साथ दृढ़ भक्ति प्रदान करनेवाली, विकार शून्य प्रबुद्धेश्वरी थावे धाम में विराजमान भगवती सिंहासिनी हमलोगों की रक्षा करें।

आसीदेकसुसेवकस्तु नगरे मानस्य पृथ्वीपतेः,
सर्पैर्व्याघ्रगणान् प्रबाध्य रहसुर्मेधिष्ठ बद्ध्वा तथा।
धान्यं तेन कृतं तृणाद् बहुविधं यस्याः प्रसादेन सा,
थावेधामनिवासिनी भगवती सिंहासिनी पातु नः।।५।।

जिस जगज्जननी माँ की कृपा से पृथ्वीराज मानसिंह (मननसिंह) के नगर में रहनेवाला एक रहसु नामक भक्त साँपों की रस्सी से बाघों को मेह (स्तम्भ) में बाँधकर तृणों के मर्दन (दौंरी) से धान्य आदि विभिन्न प्रकार के अन्न प्राप्त करता था, वह थावे धाम में निवास करने वाली भगवती सिंहासिनी हमलोगों की रक्षा करे।

लोकस्यास्य सुरक्षिकाऽभयकरी देवी प्रसन्नानना,
रक्षन्ती भुवनत्रयं शुचिकरी श्यामा च भूधारिणी।
मूर्द्धानं वलयो विदार्य रहसोः सन्दर्शितः सा यया,
थावेधामनिवासिनी भगवती सिंहासिनी पातु नः।।६।।

इस संसार की रक्षिका, अभय करनेवाली, प्रसन्नमुख, तीनों भुवन की रक्षा करती हुई अपने दर्शन मात्र से जीवों को परमपवित्र बना देनेवाली, श्याम-वर्णवाली तथा पृथ्वी को धारण करनेवाली, जिन्होंने भक्तरहसु का मस्तक विदीर्ण (फाड़) कर कंगन दिखाया एवं रहसु का उद्धार किया, वे थावे धाम में निवास करने वाली भगवती सिंहासिनी हमलोगों की रक्षा करें।

यां दुर्गां च भजन्ति सर्वमनुजा गायन्ति यां गायकाः,
यां चण्डीं प्रणमन्ति देवदनुजा अर्चन्ति यां पण्डिताः।
या माता करुणामयी शुभकरी ज्ञानस्य सा भास्करी,
थावेधामनिवासिनी भगवती सिंहासिनी पातु नः।।७।।

जिन दुर्गा देवी को सभी मानव (किसी न किसी रूप में) भजते हैं। गीतों के माध्यम से गायक सदा जिनके गुणगान करते हैं, जिन चण्डी की उपासना देव-दानव आदि सब करते हैं, ब्रह्म रूपमें विद्वज्जन जिनका ध्यान करते हैं, जो करुणामयी माँ सदा मंगल करने वाली तथा ज्ञान की प्रकाशिका (परमज्योति) हैं। वे थावे धाम में निवास करने वाली भवगती सिंहासिनी हमलोगों की रक्षा करें।

या शक्तिश्च दयामयी हि जगतः कर्त्री च भर्त्री तथा,
या सर्वेषु चराचरेषु सततं भूतेषु वै संस्थिता।
या धात्री जनतोषिणी च मृदुला देवांशभूता च सा,
थावेधामनिवासिनी भगवती सिंहासिनी पातु नः।।८।।

जो आदिशक्ति (विश्वबीज) हैं, जीवों पर सदा दया करनेवाली हैं, जो इस जगत् की सृष्टि, पालन एवं संहार की हेतु है, जो जड़-चेतन सबमें समान रूप से स्थित हैं तथा सेवकों को सन्तुष्ट करने वाली धात्री जो अजन्मा हैं फिर भी देवताओं का गौरव बढ़ाने के लिए उनके अंश से प्रादुर्भूत हुईं, वे थावे धाम निवासिनी भगवती सिंहासिनी हमलोगों की रक्षा करें।

देव्यष्टकमिदं पुण्यं प्रेम्णा पठति यो नरः।
सत्कीर्तिः वर्द्धते तस्य शुक्लपक्षे यथा शशी।।९।।

विघ्नानि विलयं यान्ति प्राप्नोति परमं सुखम्।
लभते सकलान् कामान् देवीसान्निध्यसंयुतान्।।१०।।

देवी के इस पुण्यमय अष्टक का प्रेम एवं श्रद्धापूर्वक जो नर पाठ करता है उसकी सत्कीर्ति शुक्लपक्ष के चन्द्रमा की तरह नित्य व्यापकता को प्राप्त करती है, उसके सम्पूर्ण विघ्न नष्ट हो जाते हैं। और वह परम सुख की प्राप्ति के साथ-साथ भगवती जगदम्बा का सान्निध्य (अपनत्व) एवं सकल मनोवाञ्छित फलों को प्राप्त कर लेता है।

।।ॐ देवि तुभ्यं नमः।।

लेखकस्य प्रकाशिताः प्रकाश्यमानाश्च कृतयः
तत्र पुस्तकानि

१.	वेदामृतम्	(प्रकाशितम्)
२.	रूपच्छन्दोवलिः	(प्रकाशिता)
३.	प्रक्रियारत्नसारः	(प्रकाशनाधीनः)
४.	वैयाकरणसिद्धान्तकौमुद्याः संख्यात्मकमनुशीलनम्	(प्रकाशनाधीनम्)
५.	कला	(प्रकाशनाधीना)
६.	अर्थनीतिः	(प्रकाशनाधीना)
७.	वाग्विनोदावली	(प्रकाशनाधीना)

तत्तत्पत्रिकासु प्रकाशिताः शोधनिबन्धाः काव्यादीनि च

	कृतिनाम	पत्रिकानाम	प्रकाशनस्थानम्
१.	सिंहासिन्यष्टकम्	पारिजातम्	कर्णपुरम्
२.	भोः सर्वमानवाः!	संस्कृतभवितव्यम्	नागपुरम्
३.	राष्ट्रियसेवायोजनाष्टकम्	सृजनम्	वाराणसी
४.	राष्ट्रस्य पुनर्निर्माणे मालवीयस्य परिकल्पना	गाण्डीवम्	वाराणसी
५.	वाक्यतत्त्वविमर्शः	संस्कृतविद्या	वाराणसी
६.	पाणिनेः शब्दान्वाख्यानपद्धतिः	संस्कृतविद्या	वाराणसी
७.	संस्कृतं सर्वभाषोपजीव्यम्	सृजनम्	वाराणसी
८.	संस्कृतव्याकरणभाषा-विज्ञानयोस्तुलना	(प्रकाशनाधीनोऽयं निबन्धः)	
९.	संस्कृतवाङ्मये जीवनदर्शनम्	(प्रकाशनाधीनम्)	
१०.	वैयाकरणानाम्मते जातौजातिर्भवति न वा?	(प्रकाशनाधीनोऽयं निबन्धः)	
११.	धर्मस्वरूपम्	(प्रकाशनाधीनम्)	
१२.	श्रीधनञ्जयदासपञ्चकम्	श्रीधनञ्जयदासश्रद्धाञ्जलिशतकम्,	वृन्दावनम्।

मुद्रक- इन्द्रा प्रिण्टर्स, मो0- 9336927254